॥ ॐ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीमन्महाभारतोक्तम्

श्रीदिव्यशिवसहस्रनामस्तोत्रम्

शिवपूजापञ्चाथर्वशीर्षदेविकालहरीत्यादिसमेतम्

189

सम्पादकः

डॉ० विहारीलालशास्त्रीवासिष्ठ

ज्योतिष विभागाध्यक्ष

श्रीरणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ

शास्त्रीनगर जम्मू तविषी ।

वितरकः प्रकाशकश्चः—

श्रीराम शर्म शास्त्री सङ्गोत्तरः

ज्योतिषाचार्यः B.ed.

श्रीरणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठम्

३०४-A शास्त्रीनगर जम्मू ।

मूल्यम्—सश्रद्धंभक्त्या नित्यपाठः

सं० २०५१ विक्रमी सन् 1994 ईस्वी

सहस्रास्यो नागः प्रभुरपि मतः पञ्चवदनः
षडास्यो हन्त्रैकस्तनय इतरो वारणमुखः ।
गृहे भैक्ष्यं शश्वत्प्रभवतु कथं वर्तनमिति
श्वसत्यां पार्वत्यामथ जयति शम्भुः स्मितमुखः ॥

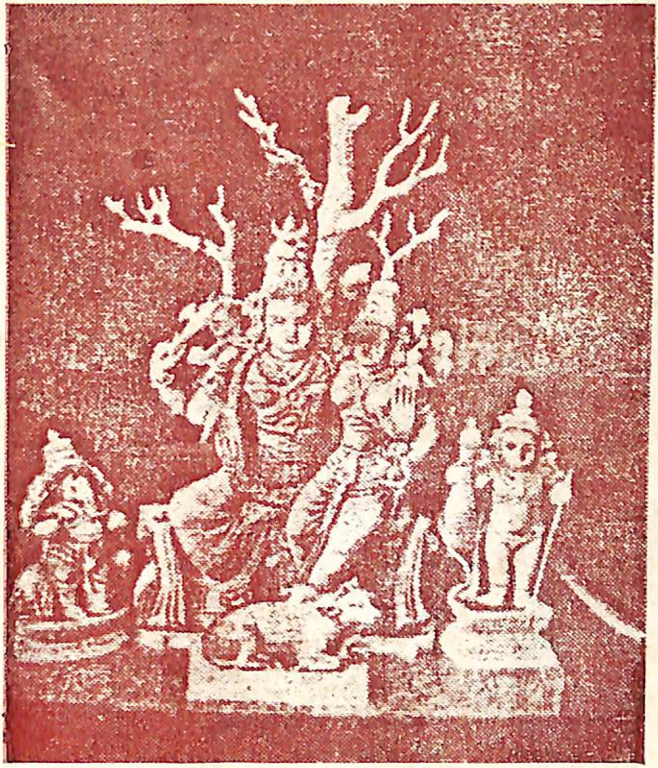

श्रीगणेश जी, गौरीशंकर जी, श्रीकार्तिक जी

भारतीय संस्कृति में

श्री शुद्धमहादेव जी

मार्गे मार्गे निर्मलं ब्रह्मवृन्दं वृन्दे वृन्दे तत्वचिन्तानुवादः ।
वादे वादे जायते तत्वबोधो बोधे बोधे भासते चन्द्रचूडः ॥

भूमण्डल पर अनन्त सुन्दरातिसुन्दर देश विराजमान हैं। दूर २ से दर्शक असंख्यधनखर्च कर वहां पहुंचते हैं। किन्तु विष्णु-पुराण में लिखा है कि—

तत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बुद्वीपे महामुने ।
यतो हि कर्मभूरेषा ततोऽन्या भोगभूमयः ॥

जिस प्रकार भारत में भगवान् की आस्था कण-कण में ईश्वर-सत्ता का विश्वास है ऐसा अन्यत्र सर्वत्र कहीं विश्वास नहीं। भारत का भावुक साकार परमात्मस्वरूप को प्रत्येक प्रतिमा में देखता है। भक्त उदारता लिये मूर्ति को चिन्मय स्वीकार करता है

प्रतिमामन्त्रतीर्थेषु दैवज्ञे भिषजे गुरौ ।
यादृशी भावना यस्य बुद्धिर्भवति तादृशी ॥

भगवान् शंकर तो अनादि, अनन्त हैं उनकी स्मृति में कुछ भी लिखना उनकी कृपा पर ही निर्भर है। स्मृति त्रिविधता भावना, बेग और संस्कार रूप में दार्शनिक स्वीकार करते हैं। भावना माता के दूध के रूप में है वेग पिता के प्रेम से एवं संस्कार अपने पूर्व जन्म से चले आते हैं। तीनों के प्रभाव से साधक भगवान् शंकर की कृपा का पात्र बनता है सृष्टि के आरम्भ में पितामह

ब्रह्मा ने मानसिक सृष्टि में सनकादि चार कुमारों की रचना की। उन्हें सृष्टि रचने का आदेश दिया तो उन्होंने आज्ञा को अस्वीकार कर दिया। ब्रह्माजी के क्रोध में भ्रूमध्य से वही रोष नीललोहित कुमार के रूप में प्रकट हुआ। वह भवस्वरूप रोने लगा अतः उनको रोने के कारण रुद्र कहा गया।

अतः श्रीकृष्ण गीता में—"रुद्राणां शंकरश्चास्मि"। एवं भागवत में—"रुद्राणां नीललोहित" विभूतियों में स्वीकार किया है। नीललोहित ही साक्षात् शंकर हैं।

मन्यु, मनु, महिनस, महान शिव, ऋतध्वज, उग्ररेता, भव, काल, वामदेव और धृतव्रत—ये एकादश रुद्र कहे गये हैं एवं उनके —हृदय, इन्द्रिय, प्राण आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र और तप। क्रमशः रुद्रों के एकादश स्थान हैं।

—धी, वृत्ति, उशना, उमा, नियुति, सर्पि, इला, अम्बिका इरावती, सुधा और दीक्षा—ये क्रमशः रुद्रों की एकादश पत्नी कहलाती हैं। ब्रह्माजी ने उन्हें सृष्टि रचना की आज्ञा दी स्वभावानुसार--प्रेत, पिशाच, भैरव, विनायक, यातुधान, डाकिनी, शाकिनी, कूष्माण्ड, वेताल, भूत, योगिनी आदि की उन्होंने रचना की। ब्रह्माजी ने उस विकराल सृष्टि से रोककर उनको तपका आदेश दिया। उस के पश्चात् दक्षने अपनी सती कन्या से विवाह कर दिया जिस का वर्णन पूर्वपीठिका में हो चुका है उसके वाद सती ने हिमालय की पुत्री बनकर शिव प्राप्ति के लिये घोर तपस्या की पत्ते खाना भी छोड़कर वह अपर्णा हुई। तारकासुर ने स्वर्ग पर अधिकार प्राप्त कर लिया ब्रह्मा से उसने वर प्राप्त कर

लिया था कि शिव का औरस पुत्र ही तारक का बध कर सकेगा। अतः देवताओं ने तपोलीन शिवजी के पास काम को भेजा तो वह भी भस्म हो गया। तभी से काम अनङ्ग हुआ काम के भस्म होने पर भी पार्वती जी की तपस्या सफल हुई। उमा के साथ शंकर जी का बिवाह सम्पन्न हुआ। भगवान् शिवजी के औरस पुत्र कार्तिक जी के हाथों तारकासुर का बध हुआ। पार्वती जी से सन्तुष्ट होकर शंकर जी ने उन्हें अपने आधे शरीर में ही स्थान दे दिया। और भगवान् शंकर अर्धनारीनरेश्वर बन गये। समुद्र मन्थन से विष उत्पन्न हुआ उसे शंकर जी पी गये तो वे नीलकण्ठ हो गये। चन्द्रमा निकला तो उसे शिवजी ने जटाजूट में बान्ध दिया इससे वे चन्द्रचूड़ हुए। मायावी मय ने स्वर्ण, रजत, और लोहे के तीन नगर बनाए। ये तीनों अपने पुत्रों को दे दिये वे तीनों आकाश में उडते रहते थे। उन्होंने इन्द्र को जीत कर स्वर्गपर आधिपत्य प्राप्त कर लिया। देवताओं ने भगवान् शंकर जी की शरणली। भगवान् शकर पिनाक हाथ में ले उनसे युद्ध करने लगे दैत्यों को मार २ कर पिछाडने लगे तो मयासुर ने एक कूप अमृत का बनाया जो अमृत से भरा था जो असुर मरते थे वे अमृत कूप में पड़कर पुनर्जीवित हो जाते थे। ये देख भगवान् बिष्णु ने गोरूप धारण कर सभी अमृत पी लिया। फिर भगवान् शंकरजी ने एक ही बाण से तीनों को धाराशायी कर दिया।

एक बार अन्धकासुर ने उमा को देख लिया तो उस पर मोहित हो उसके पीछे पड़ा तो शंकर ने उसके साथ युद्ध करते २ उसे त्रिशूल पर चढाकर घुमाना आरम्भ किया उस शरीर से भगवान् पर रुधिर बूंद पड़ी तो वह चीचिका देवी के रूप में बदल

गयी दूसरा रुधिर पुंज भूमि पर पड़ा उससे मंगल ग्रह की उत्पत्ति हुई। ये दोनों रुधिरपायी माने जाते हैं। भगवान् शंकर ने जब तक उसका रुधिर न समाप्त हुआ तब तक शूलपाणि बने उसे घुमाते रहे। रुधिर समाप्त होने पर वह शुद्ध होकर अन्धक प्रार्थना करने लगा तो उसे अपना भृंगीनामक गणनायक बना दिया अन्धक को शुद्ध करने से भगवान् ने उसे शुद्धान्धक कहकर पुकारा उस स्थान का नाम शुद्धमहादेव हो गया वहीस्वयं त्रिशूलपाणि भी कहे जाते हैं। अठारहवें महायुग में द्वापरान्त में कश्यप ने घोर तपस्या कर भगवान् शंकर को प्रसन्न किया तो भगवान् ने प्रसन्न होकर वर मांगने के लिये कहा तो उन्होंने मद्र देश की आपत्ति जनता की दुर्गति से रक्षा पाने का वर मांगा तो भगवान् अर्ध-नारीनरेश्वर के रूप में पार्वती को कहा कि आप देविका के रूप में नदी वन कर मद्र (डुग्र) देश का कल्याण करें। पार्वती ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य कर प्रार्थना की कि मैं जहां-जहां नदी रूप बन कर चलूं वहीं २ आपभी साथ रहने चाहिये। शिवजी ने तथास्तु कहकर स्वीकार कर लिया। देविका सहस्रधारा से चलकर शुद्धिक्षेत्र में तविषी के साथ संगम के वाद लुप्त हो गयी। फिर प्रभासक्षेत्र ऊधमपुर से तविषी में समा गई फिर जन्द्राह इद्रपुरी में पुनः तविषी में संगम कर फिर सौरभसर और मानसर के उत्तर की ओर सुकोण में प्रकट होकर पुनर्लुप्त हो पुरमण्डल (इन्द्रक्षेत्र) में इन्द्रेश्वर, उमेश्वर, वीरेश्वर, खड्गेश्वर, विल्वकेश्वर भूतेश्वर, अविमुक्तेश्वर (काशीश्वर विश्वनाथ), गयेश्वर इन आठ तीर्थों में होती हुई उत्तर वाहिनी काशी प्रयाग गया गदाधर मन्दिर

के पास से होकर हर मन्दिर होती हुई विश्वन्तर (वेस्सन्तर) में बेणी संगम में जाकर लुप्त हो गई। इस प्रकार शुद्धमहादेव शुद्धि क्षेत्र में, कामेश्वर महादेव प्रभास क्षेत्र में; कोणश्वर महादेव सुकोण में एवं पुरमण्डल (इन्द्रक्षेत्र) में आठों महादेव विश्वन्तर देविका संगम में हरहर महादेव हरिमन्दिर में इस प्रकार ये मद्र में देविका नदी के तट पर द्वादशज्योतिर्लिङ्ग माने जाते हैं इसके अतिरिक्त असंख्य लिंग प्रतिमा सहस्रधारा से हरहर मन्दिर तक विराजमान हैं देविका २४ कोस लम्बाई और चार-चार कोस चौड़ाई में जितने कुएं तालाब, बावड़िएं, नाले पल्वल (छप्पड़) हैं वे सब देवका का रूप हैं। यहां मार्ग, फाल्गुन, चैत्र की शुक्ल कृष्ण चतुर्दशीतिथियों में तीन करोड़, पचास लाख साठ हजार तीर्थ स्नान करने के लिये आते हैं।

षष्टितीर्थ सहस्राणि तिस्रः कोटयोऽर्धकोटयः।
आयान्ति देविकातीर्थं मार्गे चैत्रे त्रिकेऽथवा॥

पद्मपुराण प्रभासखण्ड

ये संक्षिप्त शुद्धमहादेव देविका का कथासार, दिव्यशिव सहस्रनाम माला, पूर्वपीठिका सहित, पञ्चाथर्वशीर्ष, मृत्यंजय स्तोत्र, देविकालहरी, तृचाकल्प नमस्कार' पत्नी प्राप्ति अनुष्ठानादि लघुकायग्रन्थ में श्रीराम शास्त्री सङ्गोत्तरा ज्योतिषाचार्य जो ने प्रकाशित करके शिव भक्तजनों पर बहुत उपकार किया है भगवान् शंकर जी अवश्य इनकी मनः कामनाओं की पूर्ति करेंगे।

卐卐

श्रीसत्यनारायणरक्षास्तोत्रम्

औषधे पातु मां विष्णुः भोजनेऽव्याज्जनार्दनः ।
शयने पद्मनाभोऽव्याद् विवाहेऽव्यात्प्रजापतिः ॥
युद्धे चक्रधरो रक्षेत्प्रवासेऽव्यात्त्रिविक्रमः ।
नारायणस्तनुत्यागे श्रीधरः प्रियसंगमे ॥
दुःस्वप्ने पातु गोविन्दः संकटे मधुसूदनः ।
नृसिंहः कानने रक्षेज्जलशायी च पावके ॥
वराहो जलमध्येऽव्यात्पर्वते रघुनन्दनः ।
गमने वामनो रक्षेत्सर्वकार्येषु माधवः ॥
सत्यनारायणीं रक्षां दर्भी खड्गी तुली(हली)कृती ।
पठेदापद्विनिर्मुक्तः साक्षी नारायणः स्वयम् ॥

श्री सत्यनारायण रक्षा समाप्ता ।

ऋषि तर्पणी पर्व महोत्सव
श्रीविक्रम स० २०५१ भाद्र प्र० ६
श्रावण शुक्लपूर्णिमा रविवार
२३ श्रीरघुनाथपुरी जम्मू

सम्पादक: —
डा० विहारीलाल बासिष्ठ
अध्यक्ष ज्योतिषविभाग
श्रीरणवीर स० के० विद्यापीठ
३०४-A शास्त्रीनगर जम्मू-तविषी

पार्वती के रोष एवं खेद का निवारण करने के लिए भगवान शिव के द्वारा दक्षयज्ञ का विध्वंस किये हुए शिव सहस्रनाम स्तोत्र से सतुष्ट होकर महादेव जी का उन्हें वरदान देना। तथा उस स्तोत्र की महिमा।

।। शिवसहस्रनाम की पूर्वपीठिका ।।

जनमेजय जी वैशम्पायन जी से पूछते हैं। कि हे ब्रह्मन् वैवस्वत मन्वतर में प्रचेताओं के पुत्र दक्ष प्रजापति का अश्वमेध यज्ञ कैसे नष्ट हुआ, वैशम्पाय जी बोले प्राचीनकाल में हिमालय के समीपवर्ती हरिद्वार में (कनखल) ऋषि एव सिद्ध पुरुषों का निवास जानकर प्रजापति दक्ष ने अश्वमेध यज्ञ की योजना बनाई, वहां सभी देव, दानव, गन्धर्व, पिशाच, नाग, राक्षसादि, नारद, विश्वावसु, अफसरोगण, द्वादशादित्य, आठवसु, एकादशरुद्र, साध्य, इन्द्र सहित मरुद्गण, अग्निष्वात्तादि पितृगण, ब्रह्मासहित समग्र देवगण, अपनी पत्नियों सहित विमानों पर आते हुए दिखाई दिए, तब महर्षि दधीचि ने भगवान् शंकर को यज्ञ में अनुपस्थित जान ध्यान लगाकर देखा, भगवान् शंकर और जगन्माता पार्वती का दर्शन हुआ, और वहीं महात्मा नारद को देखकर योगवेत्ता दधीचि, अत्यन्त संतुष्ट हुआ, और बोला, हे यज्ञ में पधारने वाले देवऋषि पितृगण यहां पूज्यों की पूजा का त्याग और अपूज्य पुरुषों का सत्कार हो वहां अनन्त पापों का उदय होता है, भगवान् गौरीशंकर की अनुपस्थिति के कारण भगवान् शंकर अवश्य इस यज्ञ को नष्ट भ्रष्ट कर देंगे। दक्ष ने कहा हाथों में त्रिशूलधारण करनेवाले कई रुद्र यहां विराजमान हैं। उनके

अतिरिक्त मैं किसी महेश्वर को नहीं जानता। दधीचि बोले, कि यह आपका अपूर्ण निर्णय है, किन्तु मैं किसी को देवता नहीं समझता। अतः महादेव इस यज्ञ को नष्ट भ्रष्ट कर देंगे, दक्ष कहता है, कि मैंने समस्त सामग्री यज्ञ की उपस्थित करली है, आर भगवान् विष्णु ही यज्ञ स्वरूप हैं। यह उनके अर्पण की जाएगी। उधर कैलास में भगवती पार्वती अत्यन्त खिन्न होकर कह रही थी। कि मैं कौन सा व्रत दान या तप करूं जिसके प्रभाव से यज्ञ का भाग मेरे पति परमेश्वर शंकर भगवान् को प्राप्त हो, क्षुब्ध हुई परमप्रिया की पुकार सुनकर भगवान् शंकर हर्ष से खिलकर बोले हे देवी तू मुझे नहीं जानती, मैं सम्पूर्ण यज्ञों का नियन्ता हूं, मेरे विषय में कौन सा वचन उत्तम होगा, यह तुम नहीं जानती, यज्ञ में सभी देवता मेरी स्तुति करते हैं, देवी कहती हैं, कि स्त्री समाज में सभी गर्वपूर्ण भाषण करते हैं, इसमें तनिक भी संदेह नहीं। श्री महादेव जी कहते हैं, हे प्रिये ? मैं डींग नहीं हांक रहा हुं, जिस कारण आपको अत्यन्त खेद का अनुभव हुआ है। उस यज्ञ को नष्ट करने के लिए, जिस वीरपुरुष की सृष्टि कर रहा हूं, उसकी ओर भी दृष्टिपात करें। इतना कहते ही भगवान् शंकर के मुख से एक अद्भुत एव भयंकर प्राणी उत्पन्न हुआ, जो पार्वती के हर्ष का कारण बना। शिवजी महाराज ने उसको यज्ञ के विध्वंस करने की आज्ञा दी। और माता पार्वती के क्रोध से भी महाकाली ने उस वीरभद्र का साथ दिया। तो वीरभद्र के शरीर से भी अनन्त रौद्रगणों की उत्पत्ति हुई, जो साक्षात् शंकर रूप धारण किए थे, उनके प्रकोप से धरती कांप उठी, आंधी और तूफान से समुद्र भी क्षुब्ध हो गया। उस समय न आग, न सूर्य ग्रह

नक्षत्र चन्द्रमा, देवगण, ऋषिगण सभी छिप गए, और दक्ष से अपमानित रूद्रगण यज्ञ के सदस्यों को पीटने लगे, यज्ञ की सभी सामग्री को कुचलने लगे। दूध की नदियें भी खीर दही आदि की कीचड़ खांड शकर मिश्री चोनी का रेता और सभी षटरस गुड़ आदि उत्तमरसों की नहर बहने लगीं। खाद्य पदार्थों को खाते पीते और सभी यज्ञ के साधनों को भस्म करते जाते थे, तब दक्ष ने वीरभद्र से पूछा, हे देवाधिदेव आप कौन हैं। वीरभद्र ने कहा, हे ब्रह्मन ! मैं रूद्र हूं, न देवी, और नां ही मैं यज्ञ में निमन्त्रण खाने आया हूं, मैं महादेव जी के क्रोध से उत्पन्न वीरभद्र हूं और आपकी पुत्री जगन्माता पार्वती के क्रोध से भद्रकाली इन दोनों को भगवान शंकर ने आज्ञा देकर भेजा है। वीरभद्र के यह वचन सुनकर दक्ष अनेक प्रकार से स्तुति करने लगा, तत्क्षण भगवान् शंकर सहसा अग्निकुण्ड से प्रगट होकर मुस्कराकर बोले, कहिए मैं आपका कौन सा कार्य सिद्ध करूं। तत्क्षण देवमुख वृहस्पति ने महादेव जी की स्तुति करते हुए, यज्ञाध्याय का पाठ किया, और दक्ष दोनों नेत्रों से आंसुओं की धारा वरसाते हुए स्तुति करने लगे, हे देव ? मैं आपका अनुग्रह पात्र हूं, मेरे यज्ञ का सम्भार जो नष्ट भ्रष्ट हो गया है। वह व्यर्थ न हो, तो भगवान शंकर ने प्रसन्न होकर तथास्तु कह कर मनचाहा वर दे दिया, तो दक्ष घुटने टेक कर प्रणाम करता हुआ, सहस्रनाम द्वारा भगवान् की स्तुति करने लगा।

।। शिवरात्रिव्रतपूजासु ।।

।। प्रतिप्रहरमर्घ्यं चतुष्टयं प्रार्थनाश्च ।।

प्रथम प्रहरार्घ्यम्—शिवरात्रिव्रतं देव पूजाजपपरायणः ।
प्रथमार्घ्यं मयादत्तं गृहाण परमेश्वर ।।
प्रार्थना— नमो यज्ञ जगन्नाथ नमस्त्रिभुवनेश्वर ।
पूजां गृहाण मे नाथ प्रथमे प्रहरे कृताम् ।।१।।

द्वितीय प्रहरार्घ्यम्:—नमः शिवाय शान्ताय सर्वपाप हराय च ।
शिवरात्रौ द्वितीयार्घ्यं प्रसीद त्वमुमया सह ।।
प्रार्थनाः— नमोऽव्यक्ताय सूक्ष्माय नमस्ते त्रिपुरान्तक ।
पूजां गृहाण देवेश यथा शक्त्योपपादिताम् ।।२।।

तृतीय प्रहरार्घ्यम्:—दुःखदारिद्र्य शोकैश्च दग्धोऽहं पार्वतीपते ।
शिवरात्रौ तृतीयार्घ्यमुमाकान्त गृहाण मे ।।
प्रार्थनाः— बद्धोऽहं विविधैः पाशैः संसारभय बन्धनैः ।
पतितं मोहजाले मां त्वं समुद्धर शंकर ।।३।।

चतुर्थप्रहरार्घ्यम्:— मयाकृतान्यनेकानि पापानिहर शंकर ।
शिवरात्रौ तुरीयार्घ्यमुमाकान्त गृहाण मे ।
प्रार्थनाः— किं न जानासि देवेश तावद् भक्ति प्रयच्छ मे ।
स्वपादाग्रतले देव दास्यं देहि जगत्पते ।।४।।

क्षमापणस्तवः—त्वदालोकनमात्रेण पवित्रोऽस्मि न संशयः ।
संसारक्लेशदग्धस्य व्रतेनानेन शंकर ।।
रात्रौ जागरणेनाद्य चतुष्प्रहरार्चनेन च ।
प्रसीद सुमुखमुखैर्ज्ञानदृष्ट्या क्षमस्व माम् ।।

अथ शिवार्चनम्

गणेशपूजा—ॐ गणानान्त्वागणपति ँ हवामहेप्रियाणान्त्वाप्रियपति ँ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति ँ हवामहे वसो मम ।। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् ।

प्रार्थना--ॐ गणानान्त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपश्रवस्तमम् ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पतऽआनः शृण्वन्नूतिभिः सीदसादनम् ।

गौरीपूजा— ॐ अम्बेऽअम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन । स सस्त्यश्वकः सुभद्रिकांकाम्पीलवासिनीम् ।।

प्रार्थना— ॐ गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी अष्टापदी नवपदी बभूवशी सहस्राक्षरा परमे व्योमन्

नन्दीश्वरपूजा— ॐ आयङ्गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरम्पुरः । पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ।

प्रार्थना—ॐ प्रैतुवाजी कनिक्रदन्नानदद्रासभः पत्वा । भरन्नग्निम्पुरीष्यमा पाद्यायुषा पुरा ।

वीरभद्रपूजा--ॐ भद्रंकर्णेभिः शृणुयामदेवा भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः स्थिरै रङ्गैस्तुष्टुवा ँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ।

प्रार्थना—ॐ भद्रो नो ऽअग्निराहुतोभद्रारातिः । सुभग भद्रो ऽअध्वरः । भद्राऽउत प्रशस्तयः ।

कार्तिकपूजनम्— ॐ यदक्रन्दः प्रथमञ्जायमान ऽउद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहूऽउपस्तुत्यम्म-हिजातन्तेऽअर्वन् ।

प्रार्थना—ॐ यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखाऽइव ।
तन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिरदितिः शर्मयच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ।

कुबेरपूजा—ॐ कुविदङ्गयववन्तो यवञ्चिद्यथा दान्त्यनु पूर्वं वियूय इहे हैषांकृणुहि भोजनानि ये वर्हिषो नमऽउक्ति यजन्ति ।

प्रार्थना--वयꣳसोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि

कीर्तीमुख पूजा – असवे स्वाहा वसवे स्वाहा विभवे स्वाहा बिवस्वते स्वाहा गणश्रिये स्वाहा गणपतये स्वाहा विभवे स्वाहाधिपतये स्वाहा शूषाय स्वाहा सꣳसर्पाय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा ज्योतिषे स्वाहा मलिम्लुचाय स्वाहा दिवापतये स्वाहा ।

प्रार्थना—ॐ ओजश्चमे सहश्चमऽआत्मा च मे तनूश्चमे शर्म च मे वर्म च मेङ्गानि च मे स्थीनि च मे परूꣳषि च मे शरीराणि च मऽआयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।

आत्मनोऽङ्गन्यासः—या ते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी । तया नस्तन्वाशन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि । **शिखायाम्**।

अस्मिन्महत्यर्णवेन्तरिक्षे भवा ऽ अधि ।
तेषाꣳसहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि ।। **शिरसि** ।

असङ्ख्याता सहस्राणि ये रुद्रा ऽअधिभूम्याम् ।
तेषाꣳसहस्र योजनेव धन्वानि तन्मसि ।। **ललाटे** ।

वयꣳसोम व्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः ।
प्रजावन्तः सचेमहि ।। **भ्रुवोर्मध्ये**

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥ **नेत्रयोः ।**

अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा
अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥
ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥ **तृतीयनेत्रे ॥**

नमः स्रुत्याय च पथ्याय च नमः काट्याय च नीप्याय च
नमः कुल्याय च सरस्याय च नमोनादेयाय च वैशन्ताय च
। **कर्णयोः ।**

मानस्तोके तनये मान ऽआयुषि मानो गोषु मानोअश्वेषुरीरिषः।
मानो वीरान्रुद्रभामिनोवधीर्हविष्मन्तः सदमित्वाहवामहे ।
। **नासिकयोः ।**

अवतत्य धनुष्ट्व ँ सहस्राक्ष शतेषुधे ।
निशीर्य शल्यानां मुखा शिवो नः सुमना भव ॥ **मुखे ।**

नमोवञ्चते परिवञ्चते स्तायूनाम्पतये नमो
नमो निषङ्गिणऽइषुधिमते तस्कराणाम्पतये नमो
नमः सृकायिभ्योजिघा ँसद्भ्योमुष्णताम्पतये नमो
नमो सिमद्भ्यो नक्तञ्चरद्भ्यो विकृन्तानाम्पतये नमः ।**ग्रीवायाम्**

नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिव ँरुद्रा उपश्रिताः ।
तेषां ँसहस्र योजनेव धन्वानि तन्मसि ॥ **कंठदेशे ॥**

नमस्त ऽआयुधायानातताय धृष्णवे ।
उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यान्तव धन्वने ॥ **बाह्वोः ॥**

ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः ।
तेषा ँसहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि ॥ **हस्तयोः ॥**

नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च।
नमो मध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च॥ **अंगुलिषु**।

नमः पर्णाय च पर्णशदाय च नमऽ उद्गुरमाणाय चा-
भिघ्नते च नमऽआखिदते प्रखिदते च नमऽइषु कृद्भ्यो
धनुष्कृद्भ्यश्च वो नमो नमो वः किरिकेभ्यो देवानाँ हृदयेभ्यो-
नमो विचिन्वत्केभ्यो नमो विक्षिणत्केभ्यो नमऽआनिर्हतेभ्यः। **हृदये**

नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रात
पतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो
नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः॥ **पृष्ठे**।
विकिरिद्र विलोहित नमस्ते ऽअस्तु भगवः।
यास्ते सहस्रँ हेतयो ऽन्यमस्मन्निवपन्तुताः॥ **उदरे**॥

नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शकराय च।
मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥ **दक्षिणकुक्षौ**।
द्रापे ऽअन्धसस्पते दरिद्रं नीललोहित्तः। आसाम्प्रजानाम्मेषां
पशूनामाभेर्मा रोङ्मोचनः किंचनाममत्॥ **वामकुक्षौ**।
हिरण्य गर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक ऽआसीत्।
सदाधार पृथिवी-द्यामुतेमाङ्कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ **नाभौ**।
मीढुष्टम शिवतम शिवो नः सुमना भव।
परमे वृक्ष ऽआयुधन्निधाय कृत्ति
वसान ऽआचर पिनाकम्बिभ्रदागहि॥ **कट्याम**।

शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते ऽअस्तुमामाहिँसीः।
निवर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय
सुवीर्याय॥ **लिंगे**॥

इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभरा महेमतीः ।
यथा शमसदद्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे ऽअस्मिन्ननातुरम् ।
। गुह्मे ।

इषे त्वोर्जेत्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्म्मण ऽआप्या॒ध्वमघ्न्या ऽइन्द्राय भागम्प्रजावतीरनमीवा- ऽअयक्ष्मा मावस्तेन ऽईशत माघव ँ सोध्रुवा ऽअस्मिन् गोपतौ स्यात वह्वीर्यजमानस्य पशून्पाहि ॥ वृष्णयोः ।

मानो महान्तमुतमानोऽअर्भकम्मान ऽउक्षन्त मुतमानऽउक्षितम् ।
मानोवधीः पितरम्मोत मातरम्मानः प्रियास्तन्वो रुद्ररीरिषः ।
। ऊर्वोः ।

एषते रुद्रभागः सहस्वस्राम्बिकया तञ्जुषस्व ।
स्वाहैषते रुद्रभाग ऽआखुस्ते पशुः ॥ जान्वोः ।

नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मद्ध्य- माय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च ॥ जंघयोः ।

नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो वृहते च वर्षीयसे च ।
नमो वृद्धाय च सवृधे च नमोऽग्र्याय च प्रथमाय च । गुल्फयोः ।

ये पथाम्पथि रक्षय ऽऐलवृदा ऽआयुर्युधः ।
तेषा ँ सहस्र योजने ऽव धन्वानि तन्मसि ॥ पादयोः ।

अद्ध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् ।
अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातु धान्यो धराचीः परासुव ।
॥ कवचे ॥

नमो विल्मिने च कवचिने च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमः ।
श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमोदुन्दुभ्याय चाहनन्याय च । अस्त्र ।

दिज्यन्धनुः कपर्दिनों विशल्यो वाणवां २ उत ।
अनेशन्नस्य या इषव ऽआभुरस्य निषङ्गधिः ।। **धनुषि** ।।

यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा ऽइव ।
तन्न ऽ इन्द्रो वृहस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु ।। **बाणे** ।।

विकिरिद्द्रविलोहित नमस्ते ऽअस्तु भगवः ।
यास्ते सहस्र॑ँहेतयो ऽन्यस्मिन्निवपन्तु ताः ।। **खड्गे** ।।

य एता वन्तश्च भूया॑ँसश्च दिशो रुद्रा वितस्थिरे ।
तेषां॑ँसहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि ।। **दिग्बधनम्** ।।

एव न्यासविधिं विधाय शिवोऽहम् इति भावयेत् ।
एवमेव शिवलिंगे ऽपि न्यासविधिं कुर्वीत् ।
ततः षोडशोपचारैः शिवार्चनं कुर्यात् ।

१. **ध्यानम्**--ध्यायेन्नित्य महेशं रजतगिरिनिभ चारुचन्द्रावतस
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्ग परशुमृगवराभीति हस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीन समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्ति वसानं
विश्वाद्यं विश्ववन्द्य निखिलभयहर पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ।।

आवाहनम्—मानो महान्तमुतमानो ऽअर्भकम्मान ऽउक्षन्तमुतमान ऽउक्षितम् । मानोवधीः पितरम्मोतमातरम्मानः प्रिया स्तन्वो रुद्ररीरिषः ।।

पुष्पासनम्—या ते रुद्रशिवातनूरघोरा पापकाशिनी ।
तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ।।

पाद्यम्— यामिषुङ्गिरिशन्तहस्ते विभर्ष्यस्तवे ।
शिवाङ्गिरित्रताङ्कुरुमाहि॑ँसीः पुरुषञ्जगत् ।।

अर्घ्यम् — शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छावदामसि।
यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मꣳसुमना ऽअसत् ॥
आचमनम् अद्ध्यवो च दधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् ।
अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातु धान्यो धराचीः परासुव ॥
स्नानम्— असौ यस्ताम्रो ऽअरुण ऽउतबभ्रुः सुमङ्गलः ।
ये चैनꣳरुद्राऽअभितो दिक्षुश्रिताः सहस्रशो वैषाꣳहेडईमहे ॥
पयःस्नानम्— आप्या यस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् ।
भवा व्वाजस्य सङ्गथे ॥
शुद्धस्नानम्—देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यांम्पूष्णो हस्ताभ्याम्
दधिस्नानम् - दधिक्राब्णोऽअकारिषञ्जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ।
सुरभिनो मुखाकरत् प्रणऽआयुꣳषि तारिषत् ॥
शुद्धस्नानम्— देवस्य त्वा सवितुः०
घृतस्नानम्--घृतवतीभुवनानाम भिश्रियोर्वी पृथ्वीमधुदुघे सुपेशसा ।
द्यावा पृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते ऽअजरे भूरिरेतसा ॥
शुद्धस्नानम्—देवस्यत्वा० असौ यस्ताम्रोऽअरुण ऽउतबभ्रुः सुमङ्गलः
ये चैनꣳरुद्राऽअभितोदिक्षुश्रिताः सहस्रशोऽवैषाꣳहेड ईमहे ॥
मधुस्नानम्— मधुवाताऽऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीर्नः
सन्त्वोषधीः । मधुनक्त मुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳरजः ।
मधुद्यौरस्तु नः पिता । मधुमान्नोवनस्पतिर्मधुमाऽऽअस्तुसूर्यः ।
माध्वीर्गावोभवन्तुनः ॥
शुद्धस्नानम्— ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विना
श्येतःश्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णायामाऽअवलिप्ता

रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ।

शर्करा स्नानम्--स्वादुः पवस्वदिव्यायजन्मनः स्वादुरिन्द्रायसुहवी तु नाम्ने। स्वादुर्मित्राय वरुणाय वायवे बृहस्पतये मधुमां २ ऽअदाभ्यः ।।

शुद्धस्नानम्— असौयो० देवस्यत्वा०

तीर्थस्नानम्— उों पञ्चनद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः।
सरस्वती तु पञ्चधासो देशे भवत्सरित् ।

शुद्धस्नानम् उों शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विनाः श्येतःश्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णायामाऽअवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ।।

।। अभिषेक जलधारा ।।

उों नमस्ते रुद्रमन्यव ऽउतोतऽइषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः ।१।
याते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनो ।
तया न स्तन्वा शन्त मया गिरिशन्ताभि चाकशीहि ।२।
यामिषुंगिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे ।
शिवां गिरित्रतां कुरु माहिँसीः पुरुषं जगत् ।३।
शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छावदामसि ।
यथा नः सर्वमिज्जगद यक्ष्मँसुमनाऽअसत् ।४।
अध्यवो च दधिवक्ता प्रथमो दैव्योभिषक् ।
अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वांश्च यातुधान्योधराचीः परासुव ।५।
असौ यस्ताम्रो ऽअरुणऽउतबभ्रुः सुमंगलः ।
ये चैन ँ रुद्राऽ अभितो दिक्षुश्रिताः सहस्रशो वंषाँ हेडऽईमहे ।६।

असौ योऽव सर्पति नीलग्रीवो बिलोहितः।
उतैन गोपाऽअदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्यः सदृष्टो मृडयाति नः ।७।
नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ।
अस्य सत्वानोऽहन्तेभ्यो ऽकरन्नमः ।८।
प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयो रात्न्योर्ज्याम् ।
याश्च ते हस्तऽइषवः परासा भगवो वप ।९।
विज्यन्धनुः कपर्द्दिनो विशल्यो बाणवां २ ऽउत ।
अनेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्गधिः ।१०।
याते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः।
तयास्मान् विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज ।११।
परि ते धन्वनो हेतिरस्मान् वृणक्तु विश्वतः ।
याऽइषुधिस्तवारे ऽअस्मन्निध हितम् ।१२।
अवतत्य धनुष्ट्व ँ सहस्राक्ष शतेषुधे ।
निशीर्य शल्यानां मुखाशिवो नः सुमनाभव ।१३।
नमस्त ऽआयुधानाततात धृष्णवे ।
उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने ।१४।
मानो महान्तमुतमानोऽअर्भकं मान ऽउक्षन्तमुत मानऽउक्षितम् ।
मानोवधीः पितर मोत मातरं मानः प्रियास्तन्नो रुद्ररीरिषः ।१५।
मानस्तोके तनये मानऽआयुषि मानोगोषु मानोऽअश्वेषु रीरिषः।
मानो वीरान्रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्वा हवामहे ।१६।

वस्त्रम्—ॐ सुजातो ज्योतिषा सहशर्म वरूथमासदत्स्वः ।
वासो ऽअग्ने विश्वरूप ँ संव्ययस्व विभावसो ॥

कटिवस्त्रम्— नमोस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ।

अथो ये ऽअस्य सत्वानो हन्तेभ्यो ऽकरन्नमः ।।

पुनराचमनीयम्—अद्ध्यवो च दधिवक्ता प्रथमो दैव्योभिषक् ।
अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वांश्च यातु धान्यों धराचीः परासुव ।।

यज्ञोपवीतम्— प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरात्न्योंर्ज्याम् ।
याश्च ते हस्त ऽइषवः पराता भगवो वप ।।

गन्धः—युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य वृहतो विपश्चितः। विहोत्रा दधे वयुना विदेक इन मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः स्वाहा।

अक्षताः— अक्षन्नमीमदन्तह्यवप्रिया ऽअधूषत ।
अस्तोषतस्वभानवो विप्रानविष्ठयामती योजान्विन्द्रते हरी ।

पुष्पम्—विज्यन्धनुः कपर्द्दिनो विशल्यो वाणवां २ ऽउत ।
अनेशन्नस्य याऽइषव ऽ आभुरस्य निषङ्गधिः ।।

विल्वपत्रम्—नमो विल्मिने च कवचिने च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च ।।

पुष्पमाला—याते हेति र्मीढुष्टमहस्ते बभूव ते धनुः ।
तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज ।।

सुगन्ध तैलं (अतरफुलेल)—अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुज्यायां हेतिं परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्पुमान्पुमाँसम्परिपातु विश्वतः ।।

धूप— ओं नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरिशयाय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमाय चेषुमते च ।।

दीप—परिते धन्वनो हेतिरस्मा वृणक्तु विश्वतः ।
अथो य ऽ इषुधिस्तवारेऽऽअस्मिन्निधेहि तम् ॥

नैवेद्यम् — अवतत्यधनुष्ट्व ँ सहस्राक्ष शतेषुधे ।
निशीर्य शल्यानां मुखो नः सुमना असत् ॥

आचमनम्— अद्ध्यवो च दधिवक्ता प्रथमो देव्योभिषक् ।
अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान्यो धराचीः परासुव ॥

मुखवास:— नमस्ते ऽआयुधायानातताय धृष्णवे ।
उभाभ्यामुतते नमो बाहुभ्यान्तव धन्वने ॥

ताम्बूलम् – नमः पर्णाय च पर्णशदाय च नमऽउदगुरमाणाय चाभिघ्नते नमः ऽआखिदते प्रखिदते च नमः इषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च वो नमो नमो वः किरिकेभ्यो देवाना ँ हृदयेभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो नमो विक्षिणत्केभ्यो नम ऽआनिर्हतेभ्यः ।

दक्षिणा –हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रेभूतस्य जातः पतिरेक ऽआसीत् ।
स दाधार पृथिवीन्द्यामुतेमाङ्कस्मै देवाय हविषा विधेम ।

ध्यानम् – शुद्धस्फटिकसङ्काशं त्रिनेत्रं पञ्चवक्त्रकम् ।
गङ्गाधरं दशभुजं सर्वाभरणभूषितम् ॥
नीलग्रीवं शशांकांकं नागयज्ञोपवीतिनम् ।
व्याघ्रचर्मोत्तरीयं च वरेण्यमभयप्रदम् ॥
कमण्डल्वक्षसूत्राभ्यामन्वितं शूलपाणिनम् ।
ज्वलन्तं पिंगलजटं शिखमुद्योत कारिणम् ॥
अमृतेनाप्लुतं हृष्टमुमादेहार्द्ध धारिणम् ।
दिव्यसिंहासनासीनं दिव्यभोगसमन्वितम् ।

दिग्देवतासमायुक्तं सुरासुरनमस्कृतम् ।।
नित्यं च शाश्वतं शुद्धं ध्रुवमक्षरमव्ययम् ।
सर्वव्यापिनमीशानमेवं वै विश्वरूपिणम् ।।
गौरीं चतुर्भुजां चण्डीं त्रिनेत्रां मुकुटोज्वलाम् ।
पद्मदर्पणहस्तां च वरदाभयहस्तकाम् ।।
दिव्यवस्त्रपरीधानां दिव्यालङ्कारभूषिताम् ।
प्रसन्नवदनां ध्यायेच्छिवोत्सङ्गे तु वामतः ।।
एवं ध्यात्वा द्विजः सम्यक् ततो यजनमारभेत् ।।

पुष्पोदकेनतर्पणम्—ॐ भव देवं तर्पयामि। ॐ शर्वं देवं तर्पयामि ॐ ईशान देवं तर्पयामि। ॐ पशुपतिदेवं तर्पयामि। ॐ रुद्रं देवं तर्पयामि। ॐ उग्रं देवं तर्पयामि। ॐ भीमं देवं तर्पयामि। ॐ महान्तं देवं तर्पयामि। ॐ देव देवं तर्पयामि। ॐ ज्येष्ठाय नमः। पुनराचमनीयम्। ॐ श्रेष्ठाय नमः। मधुपर्कः। मधुपर्कं गृहाणेश सर्वदा मधुपर्कः। मधुपर्क प्रदानेन प्रीतोभव महेश्वर। ॐ कालाय नमः गन्धः। ॐ कलविकरणाय नमः पुष्पाणि। ॐ सर्वभूतदमनाय नमो धूपः। ॐ मनोन्मनाय नमः दीपः। ॐ भवोदभवाय नमो नैवेद्यम्।

पुष्पाञ्जलयः— ॐ भवाय देवाय नमः। ॐ शर्वाय देवाय नमः। ॐ ईशानाय देवाय नमः। ॐ पशुपतये देवाय नमः। ॐ रुद्राय देवाय नमः। ॐ उग्राय देवाय नमः। ॐ भीमाय देवाय नमः। ॐ महते देवाय नमः। ॐ देव देवाय नमः। ॐ भवस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ शर्वस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ ईशानस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ पशुपतेर्देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ रुद्रस्य

देवस्य पत्न्यै नमः। ओं उग्रस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ओं भीमस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ओं महतो देवस्य पत्न्यै नमः। ओं देव देवस्य पत्न्यै नमः। ओं अघोरेभ्यो ऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः। ओं तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्। ओं शर्वाय क्षितिमूर्तये नमः। ओं उग्राय वायुमुर्तये नमः। ओं महादेवाय सोम मूर्तये नमः। ओं ईशानाय सूर्य मूर्तये नमः। एवं सम्पूज्य ततः सहस्रघटैः स्नपनम्।

ॐ श्रीगणेशायनमः ★

॥ श्रीमहाभारतोक्तम् ॥

॥ अथ श्रीशिवसहस्रनामस्तोत्रम् ॥

अस्य श्रीसदाशिवस्य दिव्यसहस्रनाम मालामन्त्रस्य भगवान् वेदव्यास ऋषिः । अनुष्टुप्छन्दः । श्री सदाशिव परमेश्वरो देवता । श्रीभगवतः साम्बसदाशिव प्रीत्यर्थे सहस्रनामस्तोत्रजपे विनियोगः ॥

अथ ध्यानम्

शान्तं पद्मासनस्थं शशधरमुकटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं,
शूलं वज्रं च खड्गं परशुमभयदं दक्षिणाङ्गे वहन्तम् ।
नागं पाशं च घण्टां डमरुक सहितं सांकुशं वामभागे ।
नानालंकार युक्तं स्फटिकमणि निभं पार्वतीशं नमामि ॥

युधिष्ठिर उवाच

यैर्नामधेयैः स्तुतवान् दक्षो देवं प्रजापतिः ।
वक्तुमर्हसि मे तात श्रोतुं श्रद्धा ममानघ ।१।

युधिष्ठिर ने पूछा— तात ! निष्पाप पितामह ! प्रजापति दक्ष ने जिन नामों द्वारा महादेव जी की स्तुति की थी, उनका मुझसे वर्णन कीजिये। उन्हें सुनने के लिये मेरे हृदय में बड़ी श्रद्धा है।१।

भीष्म उवाच

श्रूयतां देवदेवस्य नामान्यद्भुतकर्मणः ।
गूढव्रतस्य गुह्यानि प्रकाशानि च भारत ।२।

भीष्म जी कहते हैं— भरतनन्दन ! अद्भुत कर्म करने वाले गूढ व्रतधारी देवाधिदेव महादेव जी के कुछ नाम गोपनीय हैं और कुछ प्रकाशित हैं। तुम उन सबको सुनो ।२।

नमस्ते देवदेवेश देवारिबलसूदन ।
देवेन्द्रबलविष्टम्भ देवदानवपूजित ।३।

(दक्ष बोले)—देवदेवेश्वर ! आपको नमस्कार है। आप देववैरी दानवों की सेना के संहारक और देवराज इन्द्रकी शक्ति को भी स्तम्भित करने वाले हैं। देवता और दानव-सबने आपकी पूजा की है ।३।

सहस्राक्ष विरूपाक्ष त्र्यक्ष यक्षाधिपप्रिय ।
सर्वतः पाणिपादान्त सर्वतोऽक्षिशिरोमुख ।४।

आप सहस्रों नेत्रों से युक्त होने के कारण सहास्रक्ष हैं। आपकी इन्द्रियां सबसे विलक्षण अर्थात परोक्ष विषय को भी प्रत्यक्ष करनेवाली हैं, इसलिए आपको विरूपाक्ष कहते हैं। आप त्रिनेत्र-धारी होने के कारण त्र्यक्ष कहलाते हैं। यक्षराज कुबेर के भी आप प्रिय (इष्टदेव) हैं। आपके सब ओर मुख हैं ।४।

सर्वतःश्रुतिमंल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठसि ।
शङ्कुकर्ण महाकर्ण कुम्भकर्णार्णवालया ।५।

आपके कान भी सब ओर हैं। संसार में जो कुछ है, सबको व्याप्त करके आप स्थित हैं। शङ्कुकर्ण, महाकर्ण, कुम्भकर्ण, अर्णवालय,— ।५।

गजेन्द्रकर्णं गोकर्णं पाणिकर्णं नमोऽस्तु ते ।
शतोदर शतावर्त शतजिह्व नमोऽस्तु ते ।६।

गजेन्द्रकर्ण, गोकर्ण और पाणिकर्ण ये सात पार्षद आपके ही स्वरूप हैं। इन सब के रूप में आपको नमस्कार है।

आपके सैकड़ों उदर, सैकड़ों आवर्त और सैकड़ों जिह्वाएं होने ने के कारण आप क्रमशः शतोदर, शतावर्त और शतजिह्व नाम से प्रसिद्ध हैं। आपको प्रणाम है। ।६।

गायन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमर्किणः ।
ब्रह्माणं त्वा शतक्रतुमूर्ध्वं खमिव मेनिरे ।७।

गायत्री-मन्त्र का जप करने वाले द्विज आपकी ही महिमा का गान करते हैं और सूर्योपासक सूर्य के रूप में आपकी ही आराधना करते हैं। ऋषिगण आपको ही ब्रह्मा, शतक्रतु इन्द्र और आकाश के समान सर्वोच्च पद मानते हैं ।७।

मूर्तौ हि ते महामूर्ते समुद्राम्बरसंनिभ ।
सर्वा वै देवता ह्यस्मिन् गावो गोष्ठ इवासते ।८।

समुद्र और आकाश के समान अपार, अनन्त रूप धारण करने वाले महामूर्तिधारी महेश्वर ! जैसे गोशाला में गौएं निवास करती हैं, उसी प्रकार आपकी भूमि, जल, वायु, अग्नि, आकाश,

सूर्य चन्द्रमा एवं यजमानरूप आठ प्रकार की मूर्तियों में सम्पूर्ण देवताओं का निवास है।८।

मवच्छरीरे पश्यामि सोममग्नि जलेश्वरम् ।
आदित्यमथ वै विष्णुं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम् ।६।

मैं आपके शरीर में सोम, अग्नि, बरुण, सूर्य, विष्णु, ब्रह्मा तथा बृहस्पति को भी देख रहा हूं।६।

भगवान् कारणं कार्यं क्रिया करणमेव च ।
असतश्च सतश्चैव तथैव प्रभवाप्ययौ ।१०।

आप ही कारन, कार्य, क्रिया (प्रयत्न) और करण हैं। सत् ओर असत् पदार्थों की उत्पत्ति और प्रलय के स्थान भी आप ही हैं ।१०।

नमो भवाय शर्वाय रुद्राय वरदाय च ।
पशूनां पतये नित्यं नमोऽस्त्वन्धकघातिने ।११।

आप सबके उद्भवका स्थान होने से भव, संहार करने के कारण शर्व, 'रु' अर्थात पाप एवं दुःख को दूर करने से रुद्र, वरदाता होने से बरद तथा पशुओ (जीवों) के पालक होने के कारण सदा पशुपति कहलाते हैं आपने हीं अन्धकासुर का वध किया है, इसलिये आपका नाम अन्धकघाती है। आपको बारंबार नमस्कार है ।११।

त्रिजटाय त्रिशीर्षाय त्रिशूलवरपाणिने ।
त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय त्रिपुरघ्नाय वै नमः १२।

आप तीन जटा और तीन मस्तक धारण करने वाले हैं। आपके हाथ में श्रेष्ठ त्रिशूल शोभा पाता है। आप त्र्यम्बक, त्रिनेत्रधारी तथा त्रिपुरासुरका विनाश करने वाले हैं। आपको नमस्कार है ।१२।

नमश्चण्डाय कुण्डाय अण्डायाण्डधराय च ।
दण्डिने समकर्णाय दण्डिमुण्डाय वै नमः ।१३।

आप दुष्टों पर अत्यन्त क्रोध करने के कारण चण्ड हैं। कुण्ड में जल की भांति आपके उदर में सम्पूर्ण जगत् स्थित है । इस लिए आपको कुण्ड कहते हैं। आप अण्ड (ब्रह्माण्डस्वरूप) और अण्डधर (ब्रह्माण्डको धारण करने वाले) हैं। आप दण्डधारी (सब को दण्ड देने वाले) और समकर्ण (सब का समान रूप से सुनने वाले) हैं। दण्डधारण करके मूंड़ मुंड़ानेवाले सन्यासी भी आपके ही स्वरूप हैं, इस लिये आपका नाम दण्डिमुण्ड है। आपको नमस्कार है ।१३।

नमोर्ध्वदंष्ट्रकेशाय शुक्लायावतताय च ।
विलोहिताय धूम्राय नीलग्रीवाय वै नमः ।१४।

आपकी दाढें बड़ी-बड़ी और सिर के बाल ऊपर की ओर उठे हुए हैं, इस लिए आप ऊर्ध्वदंष्ट्र तथा ऊर्ध्वकेश कहलाते हैं। आप ही शुक्ल (विशुद्ध ब्रह्म) और आप ही अवतत (जगत् के रूप में विस्तृत) हैं। आप रजोगुण को अपनाने पर विलोहित और तमोगुण का आश्रय लेने पर धूम्र कहलाते हैं। आपकी ग्रीवा में नीले रंग का चिह्न है, इसलिए आपको नीलग्रीव कहते हैं। आपको नमस्कार है ।१४।

नमोऽस्त्वप्रतिरूपाय विरूपाय शिवाय च ।
सूर्याय सूर्यमालाय सूर्यध्वजपताकिने ।१५।

आपके रूप की कहीं भी समता नहीं है, इसलिए आप अप्रतिरूप हैं। विविध रूप धारण करने के कारण आपका नाम विरूप है। आप ही परम कल्याणकारी शिव हैं। आप ही सूर्य हैं, आप ही सूर्यमण्डल के भीतर सुशोभित होते हैं। आप अपनी ध्वजा और पताका पर सूर्य का चिह्न धारण करते हैं। आपको नमस्कार है ।१५।

नमः प्रमथनाथाय वृषस्कन्धाय धन्विने ।
शत्रुदमाय दण्डाय पर्णचीरपटाय च ।१६।

आप प्रमथगणों के अधीश्वर हैं। वृषभ के कन्धों के समान आपके कंधे भरे हुए हैं। आप पिनाक धनुष धारण करते हैं। शत्रुओं का दमन करने वाले और दण्डस्वरूप हैं। किरात या तपस्वी के रूप में विचरते समय आप भोजपत्र और वल्कलवस्त्र धारण करते हैं। आपको नमस्कार है ।१६।

नमो हिरण्यगर्भाय हिरण्यकवचाय च ।
हिरण्यकृतचूडाय हिरण्यपतये नमः ।१७।

हिरण्य (सुवर्ण) को उत्पन्न करने के कारण हिरण्यगर्भ कहलाते हैं। सुवर्ण के ही कवच और मुकुट धारण करने से आपको हिरण्यकवच और हिरण्यचूड़ कहा गया है। आप सुवर्ण के अधिपति हैं। आपको सादर नमस्कार है ।१७।

नमः स्तुताय स्तुत्याय स्तूयमानाय वै नमः ।
सर्वाय सर्वभक्षाय सर्वभूतान्तरात्मने ।१८।

जिनकी स्तुति हो चुकी है, वे आप हैं। जो स्तुति के योग्य हैं, वे भी आप हैं और जिनकी स्तुति हो रही है, वे भी आप ही हैं। आप सर्वस्वरूप, सर्वभक्षी और सम्पूर्ण भूतों के अन्तरात्मा हैं। आपको बारंबार नमस्कार है।१८।

नमो होत्रेऽथ मन्त्राय शुक्लध्वजपताकिने ।
नमो नाभाय नाभ्याय नमः कटकटाय च ।१९।

आप ही होता और मन्त्र हैं। आपको नमस्कार है। आपकी ध्वजा और पताका का रंग श्वेत है। आपको नमस्कार है। आप नाभ (नाभि में सम्पूर्ण जगत् को धारण करने वाले), नाभ्य (संसार-चक्र के नाभि-स्थान) तथा कट-कट (आवरण के भी आवरण) हैं। आपको नमस्कार है।१९।

नमोऽस्तु कृशनासाय कृषाङ्गाय कृशाय च ।
संहृष्टाय विहृष्टाय नमः किलकिलाय च ।२०।

आपकी नासिका कृश (पतली) है, इसलिये आप कृशनस कहलाते हैं। आपके अवयव कृश होने से आपको कृशाङ्ग तथा शरीर दुबला होने से कृश कहते हैं। आप अत्यन्त हर्षोल्लास से परिपूर्ण, विशेष हर्षका अनुभव करने वाले और हर्ष की किल-किल ध्वनि हैं। आपको नमस्कार है।२०।

नमोऽस्तु शयमानाय शयितायोत्थिताय च ।
स्थिताय धावमानाय मुण्डाय जटिलाय च ।२१।

आप समस्त प्राणियो के भीतर शयन करनेवाले अन्तर्यामी पुरुष हैं। प्रलयकाल में योगनिद्राका आश्रय लेकर सोते और सृष्टि के प्रारम्भकाल में कल्पान्त निद्रा से जागते हैं। आप ब्रह्मरूप से सर्वत्र स्थित और कालरूप च सदा दौड़नेवाले हैं। मूंड़ मुंड़ानेवाले संन्यासी और जटाधारी तपस्वी भी आपके ही स्वरूप हैं। आपको नमस्कार है ।२१।

नमो नर्तनशीलाय मुखवादित्रवादिने ।
नाद्योपहारलुब्धाय गीतवादित्रशालिने ।२२।

आपका ताण्डव-नृत्य बराबर चलता रहता है। आप सुख से शृङ्गी आदि बाजे बजाने में कुशल हैं। कमलपुष्प की भेंट लेने के लिये सदा उत्सुक रहते हैं। गाने और बजाने की कला में तत्पर रह कर आप बड़ी शोभा पाते हैं। आपको प्रणाम है ।२२।

नमो ज्येष्ठाय श्रेष्ठाय बलप्रमथनाय च ।
कालनाथाय कल्याय क्षयायोपक्षयाय च ।२३।

आप अवस्था में सब से ज्येष्ठ और गुणों में भी सब से श्रेष्ठ हैं। आपने बल नामक दैत्यको इन्द्ररूप से मथा डाला था। आप काल के भी नियन्ता और सर्वशक्तिमान् हैं। महाप्रलय और अवान्तर-प्रलय भी आप ही हैं। आपको नमस्कार है।२३।

भीमदुन्दुभिहासाय भीमव्रतधराय च ।
उग्राय च नमो नित्यं नमोऽस्तु दशबाहवे ।२४।

प्रभो ! आपका अट्टहास भयंकर शब्द करनेवाली दुन्दुभि के समान जान पड़ता है । आप भीषण व्रत को धारण करने वाले हैं । दस भुजाओं से सुशोभित होनेवाले उग्ररूपधारी आपको मेरा नित्य बारंवार नमस्कार है ।२४।

नमः कपालहस्ताय चितिभस्मप्रियाय च ।
विभीषणाय भीष्माय भीमव्रतधराय च ।२५।

आपके हाथ में कपाल है । चिताका भस्म आपको बहुत प्रिय हैं । आप सबको भयभीत करनेवाले और स्वयं निर्भय हैं तथा शम-दम आदि तीक्ष्ण व्रतों को धारण करते हैं । आप को नमस्कार है ।२५।

नमो विकृतवक्त्राय खड्गजिह्वाय दंष्ट्रिणे ।
पक्वाममाँसलुब्धाय तुम्बीवीणाप्रियाय च ।२६।

आपका मुख विकृत है । जिह्वा खड्ग के समान है । आपका मुख दाढ़ों से सुशोभित होता है । आप कच्चे-पक्के फलोंके गुद्दे के लिये लुभायमान रहते हैं । तुम्बी और वीणा आपको विशेष प्रिय हैं । आपको प्रणाम है ।२६।

नमो वृषाय वृष्याय गोवृषाय वृषाय च ।
कटंकटाय दण्डाय नमः पचपचाय च ।२७।

आप वृष (वृष्टिकर्ता), वृष्य (धर्म की वृद्धि करनेवाले), गोवृष (नन्दी) और वृष (धर्म) आदि नामों से प्रसिद्ध हैं। कटंकट नित्य गतिशील), दण्ड (शासक) और पचपच (सम्पूर्ण भूतों को पचाने वाला काल) भी आपके ही नाम हैं। आपको नमस्कार है।२७।

नमः सर्ववरिष्ठाय वराय वरदाय च ।
वरमाल्यगन्धवस्त्राय वरातिवरदे नमः ।२८।

आप सबसे श्रेष्ठ वरस्वरूप और वरदाता हैं। उत्तम वस्त्र, माल्य और गन्ध धारण करते हैं तथा भक्त को इच्छानुसार एवं उससे भी अधिक वर देनेवाले हैं। आपको प्रणाम है।२८।

नमो रक्तविरक्ताय भावनायाक्षमालिने ।
सम्भिन्नाय विभिन्नाय छायायातपनाय च ।२९।

रागी और विरागी-दोनों जिनके स्वरूप हैं, जो ध्यानपरायण, रुद्राक्ष की माला धारण करनेवाले, कारणरूप से सब में व्याप्त और कार्यरूप से पृथक्-पृथक् दिखाई देनेवाले हैं तथा जो सम्पूर्ण जगत् को छाया और धूप प्रदान करते हैं, उन भगवान् शंकर को नमस्कार है ।२९।

अघोरघोररूपाय घोरघोरतराय च ।
नमः शिवाय शान्ताय नमः शान्ततमाय च ।३०।

जो अघोर, घोर और घोर से भी घोरतर रूप धारण करने वाले है तथा जो शिव, शान्त एवं परमशान्तरूप हैं, उन भगवान्

शंकर को मेरा बारंबार नमस्कार है।३०।

एकपाद्बहुनेत्राय एकशीर्ष्णे नमोऽस्तु ते ।
रुद्राय क्षुद्रलुब्धाय संविभागप्रियाय च ।३१।

एक पाद, अनेक नेत्र और एक मस्तकवाले आपको प्रणाम है। भक्तों की दी हुई छोटी-से-छोटी वस्तु के लिये भी लालायित रहनेवाले और उसके बदलेमें उन्हें अपार धनराशि बांट देनेकी रुचि रखनेवाले आप भगवान् रुद्र को नमस्कार है।३१।

पञ्चालाय सिताङ्गाय नमः शमशमाय च ।
नमश्चण्डिकघण्टाय घण्टायाघण्टघण्टिने ।३२।

जो इस विश्व का निर्माण करनेवाले कारीगर, गौरवर्ण के शरीरवाले तथा सदा शान्तरूप से रहनेवाले हैं, जिनकी घण्टाध्वनि शत्रुओं को भयभीत कर देती है तथा जो स्वयं ही घण्टानाद और अनाहतध्वनि के रूप में श्रवणगोचर होते हैं उन महेश्वरको प्रणाम है।३२।

सहस्राध्मातघण्टाय घण्टामालाप्रियाय च ।
प्राणघण्टाय गन्धाय नमः कलकलाय च ।३३।

जिनके मन्दिर में लगे हुए घण्टों को सहस्रों आदमी बजाते हैं, घण्टों की माला जिन्हें प्रिय है, जिनके प्राण ही घण्टा के समानध्वनि करते हैं, जो गन्ध और कोलाहलरूप हैं, उन भगवान् शिव को नमस्कार है।३३।

हूंकारपाराय हूंहूंकारप्रियाय च ।
नमः शमशमे नित्यं गिरिवृक्षालयाय च ।३४।

आप हूं (क्रोध), हूं (हिंकार), हूं (आकाश, सूर्य और ईश्वर) इन सबसे परे विद्यमान शान्तस्वरूप परब्रह्म हैं, 'हूं'हूं' करना आपको प्रिय लगता है, आप 'शान्त रहो' शान्त रहो, ऐसा कहकर सदा सबको आश्वासन देने वाले हैं तथा पर्वतों पर और वृक्षों के नीचे निवास करते हैं। आपको प्रणाम है।३४।

गर्भमांससृगालाय तारकाय तराय च ।
नमो यज्ञाय यजिने हुताय प्रहुताय च ।३५।

आप फलके भीतर के गुद्देरूप मांसके प्रलोभी शृगालरूप हैं। आप ही सब को तारनेवाले तथा तरण-तारण के साधन हैं। आप ही यज्ञ और आप ही यजमान हैं। आप ही हुत (हवन) और आप ही प्रहुत (अग्नि) हैं। आपको नमस्कार है।३५।

यज्ञवाहाय दान्ताय तप्यायातपनाय च ।
नमस्तटाय तटघाय तटानां पतये नमः ।३६।

आप ही यज्ञ के निर्वाहक अथवा उसे सब देवताओं तक पहुंचाने वाले अग्निदेव हैं। आप मन और इन्द्रियों को वश में रखने वाले हैं। आप ही भक्तों का कष्ट देखकर संतप्त होनेवाले तथा शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले हैं। आप ही तट हैं। आप ही तटवर्ती नदी आदि हैं तथा आप ही तटों के पालक है। आपको नमस्कार है।३६।

अन्नदायान्नपतये नमस्त्वन्नभुजे तथा ।
नमः सहस्रशीर्षाय सहस्रचरणाय च ।३७।

आप ही अन्नदाता, अन्नपति और अन्न भोक्ता हैं। आपके सहस्रों मस्तक और सहस्रों चरण हैं। आपको बारंबार प्रणाम है।३७।

सहस्रोद्यतशूलाय सहस्रनयनाय च ।
नमो बालार्कवर्णाय बालरूपधराय च ।३८।

आप अपने सहस्रों हाथों में सहस्रों शूल लिये रहते हैं। आपके सहस्रों नेत्र हैं। आपकी अङ्गकान्ति प्रातःकालीन सूर्य के समान देदीप्यमान है। आप बालकरूप धारण करनेवाले हैं। आपको नमस्कार है ।३८।

बालानुचरगोप्ताय बालक्रीडनकाय च ।
नमो वृद्धाय लुब्धाय क्षुब्धाय क्षोभणाय च ।३९।

आप श्रीकृष्णरूप से संगी-साथी बालकों के रक्षक तथा बालकों के साथ खेल करनेवाले हैं। आप सबकी अपेक्षा वृद्ध हैं। भक्ति और प्रेमके लोभी हैं। दुष्टों के पापाचार से क्षुब्ध हो उठते हैं और दुराचारियों को क्षोभ में डालनेवाले हैं। आपको नमस्कार है ।३९।

तरङ्गाङ्कितकेशाय गुञ्जकेशाय वै नमः ।
नमः षट्कर्मतुष्टाय त्रिकर्मनिरताय च ।४०।

आपके केश गङ्गाके तरङ्गों से अङ्कित तथा गुञ्ज के समान हैं। आपको नमस्कार है। आप ब्राह्मणों के छः कर्म-अध्ययन-अध्यापन, यजन-याजन तथा दान और प्रतिग्रह से संतुष्ट रहते हैं; स्वयं यजन, अध्ययन और दानरूप तीन कर्मों में ही तत्पर रहते हैं। आपको मेरा प्रणाम है ।४०।

वर्णाश्रमाणाँ विधिवत् पृथक्कर्मनिर्वर्तिने ।
नमो घुष्याय घोषाय नमः कलकलाय च ।४१।

आप वर्ण और आश्रमों के भिन्न-भिन्न कर्मोंका विधिवत् विभाग करनेवाले, जपनीय मन्त्ररूप, घोषस्वरूप तथा कोलाहलमय हैं। आपको बारंबार नमस्कार है ।४१।

श्वेतपिङ्गलनेत्राय कृष्णरक्तेक्षणाय च ।
प्राणभग्नाय दण्डाय स्फोटनाय कृशाय च ।४२।

आपके नेत्र श्वेत और पिङ्गलवर्ण के हैं, काले और लाल रंगके हैं। आप प्राणवायु (श्वास) को जीतनेवाले, दण्ड (आयुध) रूप, ब्रह्माण्डरूपी घटको फोड़नेवाले तथा कृश-शरीरधारी हैं। आपको नमस्कार है ४२।

धर्मकामार्थमोक्षाणां कथनीयकथाय च ।
सांख्याय सांख्यमुख्याय सांख्ययोगप्रवर्तिने ।४३।

धर्म, अर्थ काम तथा मोक्ष देनेके विषय में आपकी कीर्ति-कथा वर्णन करने के योग्य है। आप सांख्यस्वरूप, सांख्ययोगियों में प्रधान तथा सांख्यशास्त्रको प्रवृत्त करनेवाले हैं। आपको प्रणाम है ।४३।

नमो रथ्यविरथ्याय चतुष्पथरथाय ।
कृष्णाजिनोत्तरीयाय व्यालयज्ञोपवीतिने ।४४।

आप रथपर बैठकर तथा बिना रथ के भी घूमनेवाले हैं।

जल, अग्नि, वायु तथा आकाश-इन चारों मार्गों पर आपकी गति है। आप काले मृगचर्म को दुपट्टे की भांति ओढ़नेवाले तथा सर्पमय यज्ञोपवीत धारण करनेवाले हैं। आपको प्रणाम है।४४।

ईशान वज्रसंघात हरिकेश नमोऽस्तु ते।
त्र्यम्बकाम्बिकनाथाय व्यक्ताव्यक्त नमोऽस्तु ते।४५।

ईशान! आपका शरीर वज्र के समान कठोर है। हरिकेश! आपको नमस्कार है। व्यक्ताव्यक्तस्वरूप परमेश्वर! आप त्रिनेत्रधारी तथा अम्बिका के स्वामी हैं। आपको नमस्कार है।४५।

काम कामद कामघ्न तृप्तातृप्तविचारिणे।
सर्व सर्वद सर्वघ्न संध्याराग नमोऽस्तु ते।४६।

आप कामस्वरूप, कामनाओं को पूर्ण करनेवाले, कामदेव के नाशक, तृप्त और अतृप्त का विचार करनेवाले, सर्वस्वरूप, सब कुछ देनेवाले, सबके संहारक और संध्याकाल के समान रंगवाले हैं। आपको प्रणाम है।४६।

महाबल महाबाहो महासत्त्व महाद्युते।
महामेघचयप्रख्य महाकाल नमोऽस्तु ते।४७।

महाबल! महाबाहो! महासत्त्व! महाद्युते! आप महान् मेघों की घटाके समान रंगवाले महाकाल स्वरूप हैं। आपको नमस्कार है।४७।

स्थूल जीर्णाङ्ग जटिले वल्कलाजिनधारिणे ।
दीप्तसूर्याग्निर्जटिले बल्कलाजिनवाससे ।४८।

आपका श्रीविग्रह स्थूल और जीर्ण है । आप जटाधारी हैं। वल्कल और मृगचर्म धारण करते हैं। देदीप्यमान सूर्य और अग्नि के समान ज्योतिर्मयी जटा से सुशोभित हैं। वल्कल और मृगचम ही आपके वस्त्र हैं ।४८।

सहस्रसूर्यप्रतिम तपोनित्यं नमोऽस्तु ते ।
उन्मादन शतावर्त गङ्गातोयार्द्रमूर्धज ।४९।

आप सहस्रों सूर्यों के समान प्रकाशमान और सदा तपस्या में संलग्न रहनेवाले हैं। आपको नमस्कार है। आप जगत को उन्माद (मोह) में डालनेवाले हैं। आपके मस्तक पर गङ्गाजी की सैकड़ों लहरें और भंवरें उठती रहती हैं। आपके केश सदा गङ्गाजल से भीगे रहते हैं ।४९।

चन्द्रावर्त युगावर्त मेघावर्त नमोऽस्तु ते ।
त्वमन्नमन्नभोक्ता च अन्नदोऽन्नभुगेव च ।५०।

आप चन्द्रमा को क्षय-वृद्धि के चक्कर में डालने वाले हैं। आप ही युगों की पुनरावृत्ति करनेवाले और मेघों के प्रवर्तक हैं। आपको नमस्कार है। आप ही अन्न, अन्न के भोक्ता, अन्नदाता, अन्नका भोजन करनेवाले ।५०।

अन्नस्रष्टा च पक्ता च पक्वभुक्पवनोऽनलः ।
जरायुजाण्डजाश्चैव स्वेदजाश्च तथोद्भिजाः ५१।

अन्नस्रष्टा, पाचक, पक्वान्नभोजी, प्राणवायु तथा जठराग्नि रूप हैं। एवं जरायुज, अण्डज, स्वेदज तथा उद्भिज आप ही हैं।५१।

त्वमेव देवदेवेश भूतग्रामश्चतुर्विधः ।
चराचरस्य स्रष्टा त्वं प्रतिहर्ता तथैव च ।५२।

देवदेवेश्वर! ये चार प्रकार के प्राणिसमूह आप ही हैं। ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ! आप ही चराचर जीवों की सृष्टि तथा संहार करनेवाले हैं।५२।

त्वामाहुर्ब्रह्मविदुषो ब्रह्म ब्रह्मविदां वर ।
मनसःपरमा योनिः खं वायुर्ज्योतिषां निधिः।५३।

ब्रह्मज्ञानी पुरुष आपही को ब्रह्म कहते हैं। वेदवादी विद्वान् आपको ही मनका परम कारण, आकाश, बायु, तेज की निधि है।५३।

ऋक्सामानि तथोङ्कारमाहुस्त्वां ब्रह्मवादिनः ।
हायिहायिहुवाहायिहावुहायि तथासकृत् ।५४।

ऋक् साम तथा ॐकार बताते हैं। सुरश्रेष्ठ! सामगान करनेवाले वेदवेता पुरुष 'हा ३ यि, हा ३ यि, हु ३ वा, हा ३ यि, हा ३ वु, हा ३ यि, आदिका बारंबार उच्चारण करते हैं।५४।

गायन्ति त्वां सुरश्रेष्ठ सामगा ब्रह्मवादिनः ।
यजुर्मयो ऋङ्मयश्च त्वमाहुतिमयस्तथा ।५५।

सामवेदी निरन्तर आपकी ही महिमा का गान करते हैं। यजुर्वेद और ऋग्वेद आपके ही स्वरूप हैं। आपही हविरूप हैं ।५५।

त्वमेव मेघसंघाश्च विद्युत्स्तनितगर्जितः ।
पठ्यसे स्तुतिभिश्चैव वेदोपनिषदां गणैः ।५६।

मेघों की घटा, बिजली, गर्जना और गड़गड़ाहट भीआप ही हैं। वेदों और उपनिषदों के समूह अपनी स्तुतियों द्वारा आपकी ही महिमा का प्रतिपादन करते हैं ।५६।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा वर्णावराश्च ये ।
संवत्सरस्त्वमृतवो मासो मासार्धमेव च ।५७।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा अन्त्यज-ये आपके ही स्वरूप हैं संवत्सर, ऋतु, मास, पक्ष, भी आप ही हैं ।५७।

युगंनिमेषाः काष्ठास्त्वं नक्षत्राणि ग्रहाःकलाः ।
वृक्षाणाँ ककुदोऽसित्वं गिरीणाँ शिखराणि च ।५८।

युग. निमेष, काष्ठा, नक्षत्र, ग्रह और कला भी आप ही हैं वृक्षों में प्रधान वट पीपल आदि. पर्वतो में उनके शिखर हैं ।५८.

व्याघ्रो मृगाणाँ पततां ताक्ष्योऽनन्तश्च भोगिनाम् ।
क्षीरोदो ह्युदधीनां च यन्त्राणां धनुरेव च ।५९।

वन-जन्तुओं में व्याघ्र, पक्षिवों में गरुड तथा सर्पों में अनन्त आप ही हैं। समुद्र में क्षीरसागर, यन्त्रों (अस्त्रों) में धनुष, भी आप ही हैं ।५९।

वज्रः प्रहरणानां च व्रतानां सत्यमेव च ।
त्वमेव द्वेष इच्छा च रागो मोहः क्षमाक्षमे ।६०।

चलाये जानेवाले आयुधों में वज्र और व्रतों में सत्य भी आप ही हैं एवं आप ही द्वेष, इच्छा, राग, मोह, क्षमा, अक्षमा हैं ।६०।

व्यवसायो धृतिर्लोभः कामक्रोधौ जयाजयौ ।
त्वं गदी त्वं शरी चापी खट्वाङ्गी झर्झरो तथा।६१।

व्यवसाय, धैर्य, लोभ, काम, क्रोध, जय तथा पराजय हैं। आप गदा, बाण, धनुष, खाटका अङ्ग तथा झर्झर नामक अस्त्र धारण करनेवाले हैं ।६१।

छेत्ता भेत्ता प्रहर्ता त्वं नेता मन्ता पिता मतः ।
दशलक्षणसंयुक्तो धर्मोऽर्थः काम एव च ।६२।

आप छेदन, भेदन और प्रहार करने वाले हैं। सत्पथपर ले जानेवाले, शुभ का मनन करनेवाले तथा पिता माने गये हैं दस लक्षणोंवाला धर्म तथा अर्थ और काम भी आप ही हैं।६२।

गङ्गा समुद्राः सरितः पल्वलानि सरांसि च ।
लता वल्यस्तृणौषध्यः पशवो मृगपक्षिणः ।६३।

गङ्गा, समुद, नदियां, गड़हे, तालाब लता, बल्ली, तृण, ओषधि पशु, मृग, पक्षी, भी अप ही हैं ।६३।

द्रव्यकर्मसमारम्भः कालः पुष्पफलप्रदः ।
आदिश्चान्तश्च देवानां गायत्र्योंकार एव च ।६४।

द्रव्यऔर कर्मोंके आरम्भ तथा फूल और फल देनेवाला काल भी आप ही हैं। आप देवताओं के आदि और अन्त हैं। गायत्री मन्त्र और ॐकार भी आप ही हैं ।६४।

हरितो रोहितो नीलः कृष्णो रक्तस्तथारुणः ।
कद्रुश्च कपिलश्चैव कपोतो मेचकस्तथा ।६५।

हरित, लोहित, नील, कृष्ण, रक्त, अरुण, कद्रु, कपिल, कबूतर के समान तथा मेचक (श्याम मेघ के समान.ये दस प्रकार के रंग भी आपके ही स्वरूप हैं ।६५।

अवर्णश्च सुवर्णश्च वर्णकारो घनोपमः ।
सुवर्णनामा च तथा सुवर्णप्रिय एव च ।६६।

आप वर्णरहित होने के कारण अवर्ण और अच्छे वर्णवाले होने से सुवर्ण कहलाते हैं। आप वर्णों के निर्माता और मेघ के समान हैं। आपके नाम में सुन्दर वर्णों (अक्षरों) का उपयोग हुआ है, इसलिये आप सुवर्णनाम हैं तथा आपको श्रेष्ठ वर्ण प्रिय है ।६६।

त्वमिन्द्रश्च यमश्चैव वरुणो धनदोऽनलः ।
उपप्लवश्चित्रभानुः स्वर्भानुर्भानुरेव च ।६७।

आप ही इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर, अग्नि, सूर्य-चन्द्र का ग्रहण, चित्रभानु (सूर्य), राहु और भानु हैं ।६७।

होत्रं होता च होत्थं च हुतं चैव तथा प्रभुः ।
त्रिसौपर्णं तथा ब्रह्म यजुषाँ शतरुद्रियम् ।६८।

होत्र (स्रुवा), होता, हवनीय पदार्थ, हवन-क्रिया तथा (उसके फल देनेवाले) परमेश्वर भी आप ही हैं। वेद की त्रिसौपर्ण नामक श्रुतियों में तथा यजुर्वेद के शतरुद्रिय-प्रकरण में जो बहुत से वैदिक नाम हैं, वे सब आप ही के नाम हैं ।६८।

पवित्रं च पवित्राणाँ मङ्गलानां च मङ्गलम् ।
गिरिको हिंसको वृक्षो जीवःपुद्गल एव च ।६९।

आप पवित्रों के भी पवित्र और मङ्गलों के भी मङ्गल हैं। आप ही गिरिक (अचेतन को भी चेतन करनेवाले), हिंसक (गमनागमन करनेवाले), संसार-वृक्ष, जीव हैं ।६९।

प्राणः सत्त्वं रजश्चैव तमश्चाप्रमदस्तथा ।
प्राणोऽपानः समानश्च उदानो व्यान एव च ।७०।

अप ही शरीर, प्राण, सत्व, रज, तम, अप्रमद (स्त्रीरहित -ऊर्ध्वरेता), प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, हैं ।७०।

उन्मेषश्च निमेषश्च क्षुतं जृम्भितमेव च ।
लोहितान्तर्गता दृष्टिर्महावक्त्रो महोदरः ।७१।

उन्मेष, निमेष (आंखों का खोलना मींचना), छींकना और जंमाई लेना आदि चेष्टाएं भी आप ही हैं। आपकी अग्निमयी लाल रंगकी दृष्टि भीतर छिपी हुई है। आपके मुखऔर उदर महान् हैं ।७१।

सूचीरोमा हरिक्ष्मश्रुरूर्ध्वकेशश्चलाचलः ।
गीतवादित्रतत्वज्ञो गीतवादनकप्रियः ।७२।

रोएं सूई के समान हैं। दाढ़ी मूछ काली है। सिरके बाल ऊपर की ओर उठे हुए हैं। आप चराचर-स्वरूप हैं। गाने-बजाने के तत्त्वको जाननेवाले हैं। गाना-बजाना आपको अधिक प्रिय है ।७२।

मत्स्यो जलचरोजाल्योऽकलःकेलिकलःकलिः ।
अकालश्चातिकालश्च दुष्कालः काल एव च ।७३।

आप मत्स्य, जलचर और जालधारी घड़ियाल हैं। फिर भी अकल (बन्धन से परे) हैं। आप केलिकलासे युक्त और कलहरूप हैं। आप ही अकाल, अतिकाल, दुष्काल तथा काल हैं ।७३।

मृत्युः क्षुरश्च कृत्यश्च पक्षोऽपक्षक्षयंकरः ।
मेघकालो महादंष्ट्रः संवर्तकबलाहकः ।७४।

मृत्यु, क्षुर (छेदन करने का शस्त्र), कृत्य (छेदन करने योग्य), पक्ष (मित्र) तथा अपक्ष-क्षयंकर (शत्रुपक्ष का नाश करनेवाले) भी आप ही हैं। आप मेघ के समान काले, बड़ी-बड़ी दाढ़ोवाले और प्रलयकालीन मेघ हैं ।७४।

घण्टोऽघण्टो घटी घण्टी चरुचेली मिलीमिली ।
ब्रह्मकायिकमग्नीनां दण्डी मुण्डस्त्रिदण्डधृक् ।७५।

घण्ट (प्रकाशवान्), अघण्ट (अव्यक्त प्रकाशवाले) घटी (कर्मफल से युक्त करनेवाले), घण्टी (घण्टावाले), चरुचेली जीवों

के साथ क्रीडा करनेवाले) तथा मिलीमिली कारणरूप से सब में व्याप्त)—ये सब आप ही हैं। आप ही ब्रह्म, अग्नियों के स्वरूप, दण्डी, मुण्ड तथा त्रिदण्डधारी हैं।७५।

चतुर्युगश्चतुर्वेदश्चातुर्होत्रप्रवर्तकः ।
चातुराश्रम्यनेता च चातुर्वर्ण्यकरश्च यः ।७६।

चार युग और चार वेद आपके ही स्वरूप हैं तथा चार प्रकार के होतृ-कर्मों के प्रवर्तक आप ही हैं। आप चारों आश्रमों के नेता तथा चारों वर्णों की सृष्टि करनेवाले हैं।७६।

सदा चाक्षप्रियो धूर्तो गणाध्यक्षो गणाधिपः ।
रक्तमाल्याम्बरधरो गिरिशो गिरिकप्रियः ।७७।

आप ही अक्षप्रिय, धूत, गणाध्यक्ष और गणाधिप आदि नामों से प्रसिद्ध हैं। आप रक्त वस्त्र तथा लाल फलों की माला पहनते हैं, पर्वत पर शयन करते और गेरुए वस्त्र से प्रेम रखते हैं।७७।

शिल्पिकः शिल्पिनां श्रेष्ठः सर्वशिल्पप्रवर्तकः ।
भगनेत्रांकुशश्चण्डः पूष्णो दन्तविनाशनः ।७८।

आप ही शिल्पियों में सर्वश्रेष्ठ शिल्पी (कारीगर) तथा सब प्रकार की शिल्पकला के प्रवर्तक हैं। आप भगदेवता की आंख फोड़ने के लिये अंकुश, चण्ड (अत्यन्त कोप करनेवाले) और पूषा के दांत नष्ट करनेवाले हैं।७८।

स्वाहा स्वधा वषट्कारो नमस्कारो नमो नमः ।
गूढव्रतो गुह्यतपास्तारकस्तारकामयः ।७९।

स्वाहा, स्वधा, वषट्, नमस्कार और नमो नम आदि पद आपके ही नाम हैं। आप गूढ़ व्रतधारी, गुप्त तपस्या करनेवाले, तारकमन्त्र और ताराओं से भरे हुए आकाश हैं।७६।

धाताविधाता संधाता विधाता धारणोऽधरः।
ब्रह्मा तपश्च सत्यं च ब्रह्मचर्यमथार्जवम्।८०।

धाता (धारण करनेवाले), विधाता (सृष्टि करनेवाले), संधाता (जोड़नेवाले), विधाता, धारण और अधर (आधाररहित) भी आपही के नाम हैं। आप ब्रह्मा, तप; सत्य, ब्रह्मचर्य आर्जव (सरलता), हैं।८०।

भूतात्मा भूतकृद्भूतो भूतभव्यभवोद्भवः।
भूर्भुवः स्वरितश्चैव ध्रुवो दान्तो महेश्वरः।८१।

भूतात्मा (प्राणियों के आत्मा), भूतों की सृष्टि करनेवाले, भूत (नित्यसिद्ध), भूत, भविष्य और बर्तमान की उत्पत्ति के कारण, भूलोक, भुवलोक, स्वलोक, ध्रुव (स्थिर), दान्त (दमनशील) और महेश्वर हैं।८१।

दीक्षितोऽदीक्षितः क्षान्तो दुर्दान्तोऽदान्तनाशनः।
चन्द्रावर्तो युगावर्तः संवर्तः सम्प्रवर्तकः।८२।

दीक्षित (यज्ञ की दीक्षा लेनेवाले), अदीक्षित, क्षमावान्, दुर्दान्ति, उद्दण्ड प्राणियों का नाश करनेवाले, चन्द्रमा की आवृत्ति करनेवाले (मास), युगों की आवृत्ति करनेवाले (कल्प). संवर्त (प्रलय) तथा सम्प्रवर्तक (पुनः सृष्टि-सचालन करनेवाले) भी आप ही हैं।८२।

कामो बिन्दुरणुः स्थूलः कर्णिकारस्रजप्रियः ।
नन्दीमुखो भीममुखः सुमुखो दुर्मुखोऽमुखः ।८३।

आप ही काम, बिन्दु, अणु (सूक्ष्म) और स्थूलरूप हैं। आप कनेर के फूल की माला अधिक पसद करते हैं। आप ही नन्दीमुख, भीममुख (भयंकर मुखवाले), सुमुख, दुर्मुख, अमुख (मुखरहित), हैं ।८३।

चतुर्मुखो बहुमुखो रणेष्वग्निमुखस्तथा ।
हिरण्यगर्भः शकुनिर्महोरगपतिर्विराट् ।८४।

चतुर्मुख, बहुमुख तथा युद्ध के समय शत्रुका सहार करने के कारण अग्निमुख (अग्नि के समान मुखवाले) हैं। हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा), शकुनि (पक्षीके समान असङ्ग), महान् सर्पों के स्वामी (शेषनाग) और विराट् भी आप ही हैं ।८४।

अधर्महा महापार्श्वश्चण्डधारो गणाधिपः ।
गोनर्दो गोप्रतारश्च गोवृषेश्वरवाहनः ।८५।

आप अधर्म के नाशक, महापार्श्व, चण्डधार, गणाधिप, गोनर्द, गौओको आपत्ति से बचानेवाले, नन्दी की सवारी करनेवाले हैं ।८५।

त्रैलोक्यगोप्ता गोविन्दो गोमार्गोऽमार्ग एव च ।
श्रेष्ठःस्थिरश्च स्थाणुश्च निष्कम्पः कम्प एव च ।८६।

आप ही त्रैलोक्य रक्षक, गोविन्द (श्रीकृष्णरूप), गोमार्ग

(इन्द्रियोंके संचालक), अमार्ग (इन्द्रियों के अगोचर), श्रेष्ठ, स्थिर, स्थाणु, निष्कम्प और कम्प हैं ।८६।

दुर्वारणो दुर्विषहो दुःसहो दुरतिक्रमः ।
दुर्धर्षो दुष्प्रकम्पश्च दुर्विषो दुर्जयो जयः ।८७।

आप ही दुर्वारण (जिनका सामना करना कठिन है, ऐसे), दुर्विषह (असह्य वेगवाले), दुःसह, दुर्लंघ्य, दुर्द्धर्ष दुष्प्रकम्प, दुर्विष, दुर्जय, जय हैं ।८७।

शशः शशाङ्कः शमनः शीतोष्णक्षुज्जराधिकृत् ।
आधयो व्याधयश्चैव व्याधिहा व्याधिरेव च ।८८।

शश (शीघ्रगामी), शशाङ्क (चन्द्रमा) तथा शमन (यमराज) हैं। सर्दी - गर्मी, क्षुधा, वृद्धावस्था तथा मानसिक चिन्ता को दूर करनेवाले भी आप ही हैं। आप ही आधि-व्याधि तथा उसे दूर करनेवाले हैं ।८८।

मम यज्ञमृगव्याधो व्याधीनामागमो गमः ।
शिखण्डी पुण्डरीकाक्षः पुण्डरीकवनालयः ।८९।

मेरे यज्ञरूपी मृगके वधिक तथा व्याधियों को लाने और मिटानेवाले भी आप ही हैं। (कृष्णरूप में) मस्तक पर शिखण्ड (मोरपङ्ख) धारण करने के कारण आप शिखण्डी हैं। आप कमल के समान नेत्रोंवाले, कमल के वनमें निवास करनेवाले हैं।८९।

दण्डधारस्त्र्यम्बकश्च उग्रदण्डोऽण्डनाशनः ।
विषाग्निपाः सुरश्रेष्ठः सोमपास्त्व मरुत्पतिः ।९०।

आप ही दण्ड धारण करनेवाले, त्र्यम्बक, उग्रदण्ड और ब्रह्माण्ड के संहारक है। विषग्नि को पी जानेवाले, देवश्रेष्ठ, सोमरस का पान करनेवाले, और मरुद्गणों के स्वामी हैं।

अमृतपास्त्वं जगनाथ देवदेव गणेश्वरः ।
विषाग्निपा मृत्युपाश्च क्षीरपाः सोमपास्तथा ।
मधुश्च्युतानामग्रपास्त्वमेव तुषिताद्यपाः ।६१।

देवाधिदेव ! जगन्नाथ ! आप अमृत पान करनेवाले और गणों के स्वामी हैं। विषाग्नि तथा मृत्युसे रक्षा करनेवाले और दूध एवं सोमरस का पान करनेवाले हैं। आप सुखसे भ्रष्ट हुए जीवों के प्रधान रक्षक तथा तुषितनामक देवताओं के आबिभूत ब्रह्माजी का भी पालन करनेवाले हैं ।६१।

हिरण्यरेताः पुरुषस्त्वमेव
त्वं स्त्री पुमांस्त्वं च नपुंसकं च।
बालो युवा स्थविरो जीर्णदंष्ट्रस्त्वं
नागेन्द्र शाकस्त्वं विश्वकृद्विश्वकर्ता।६२।

आप ही हिरण्यरेता (अग्नि), पुरुष (अन्तर्यामी) तथा आप ही स्त्री, पुरुष और नपुंसक हैं। बालक-युवा और वृद्ध भी आप ही हैं। नागेश्वर ! आप जीर्ण दाढ़ोंवाले और इन्द्र हैं। आप विश्वकृत (जगत् के संहारक), विश्वकर्ता (प्रजापति) हैं ।६२।

विश्वकृत् विश्वकृतां वरेण्यस्त्वं विश्वबाहो ।
विश्वरूपस्तेजस्वी विश्वतोमुखः ।
चन्दादित्यौ चक्षुषी ते हृदयं च पितामहः ।६३।

विश्वकृत (ब्रह्माजी), विश्वकी रचना करनेवाले प्रजापतियों में श्रेष्ठ, विश्वका भार वहन करनेवाले, विश्वरूप, तेजस्वी और सब ओर मुखवाले हैं। चन्द्रमा और सूर्य आपके नेत्र तथा पितामह ब्रह्मा आपके हृदय हैं।९३।

महोदधिः सरस्वती वाग् बलमनलोऽ-
निलः अहोरात्रं निमेषोन्मेषकर्म।९४।

आप ही समुद्र हैं, सरस्वती आपकी वाणी हैं, अग्नि और वायु बल हैं तथा आपके नेत्रोंका खुलना और बन्द होना ही दिन और रात्रि हैं।९४।

न ब्रह्मा न च गोविन्दः पौराणा ऋषयो न ते।
माहात्म्यं वेदितुं शक्ता याथातथ्येन ते शिव ९५।

शिव ! आपके माहात्म्यको ठीक-ठीक जानने में ब्रह्मा, विष्णु तथा प्राचीन ऋषि भी समर्थ नहीं हैं।९५।

या मूर्तयः सुसूक्ष्मास्ते न मह्यं यान्ति दर्शनम्।
त्राहि मां सततं रक्ष पिता पुत्रमिवौरसम्।९६।

आपके जो सूक्ष्म रूप हैं, वे हमलोगों की दृष्टि में नहीं आते। भगवान् ! जैसे पिता अपने औरस पुत्रकी रक्षा करता है, उसी तरह आप सर्वदा मेरी रक्षा करें।९६।

रक्ष मां रक्षणीयोऽहं तवानघ नमोऽस्तु ते।
भक्तानुकम्पी भगवान् भक्तश्चाहं सदा त्वयि।९७।

अनघ ! मैं आपके द्वारा रक्षित होने योग्य हूं, आप अवश्य मेरी रक्षा करें, मैं आपको नमस्कार करता हूं। आप भक्तों पर दया करनेवाले भगवान हैं और मैं सदा के लिये आपका भक्त हूं।९७।

यः सहस्राण्यनेकानि पुंसामावृत्य दुर्दृशः ।
तिष्ठत्येकः समुद्रान्ते स मे गोप्तास्तु नित्यश ।९८।

जो हजारों मनुष्यों पर माया का परदा डालकर सब के लिये दुर्बोध हो रहे हैं अद्वितीय हैं तथा समुद्र के समान कामनाओं का अन्त होने पर प्रकाश में आते हैं, वे परमेश्वर नित्य मेरी रक्षा करें।९८।

यं विनिद्रा जितश्वासाः सत्त्वस्थाः संयतेन्द्रियाः ।
ज्योतिः पश्यन्ति युञ्जानास्तस्मै योगात्मने नमः ।९९।

जो निद्राके वशीभूत न होकर प्राणों पर विजय पा चुके हैं और इन्द्रियों को जीतकर सत्त्वगुण में स्थित हैं, ऐसे योगीलोग ध्यान में जिस ज्योतिर्मय तत्त्व का साक्षात्कार करते हैं, उस योगात्मा परमेश्वर को नमस्कार है।९९।

जटिले दण्डिने नित्यं लम्बोदरशरीरिणे ।
कमण्डलुनिषङ्गाय तस्मै ब्रह्मात्मने नमः ।१००।

जो सदा जटा और दण्ड धारण किये रहते हैं, जिनका उदर और शरीर विशाल हैं तथा ककण्डलु ही जिनके लिये तरकस का काम देता है, ऐसे ब्रह्माजी के रूप में विराजमान भगवान शिव

को प्रणाम है ।१००।

यस्य केशेषु जीमूता नद्यः सर्वाङ्गसंधिषु ।

कुक्षौ समुद्राश्चत्वारस्तस्मै तोयात्मने नमः ।१०१।

जिनके केशों में बादल, शरीर की संधियों में नदियों और उदरमें चारों समुद्र हैं, उन जलस्वरूप परमात्माको नमस्कार है।१०१

सम्भक्ष्य सर्वभूतानि युगान्ते पर्युपस्थिते ।

यः शेते जलमध्यस्थस्तं प्रपद्येऽम्बुदायिनम् ।१०२।

जो प्रलयकाल उपस्थित होने पर सब प्राणियों का संहार करके एकार्णव के जल में शयन करते हैं, उन जलशायी भगवान् की मैं शरण लेता हूं ।१०२।

प्रविश्य वदनं राहोर्यः सोमं पिबते निशि ।

ग्रसत्यर्कं च स्वर्भानुर्भूत्वा माँ सोऽभिरक्षतु ।१०३।

जो रात में राहु के मुख में प्रवेश करके स्वयं चन्द्रमा के अमृत का पान करते हैं तथा स्वयं ही राहु बनकर सूर्य पर ग्रहण लगाते हैं. वे परमात्मा मेरी रक्षा करें ।१०३।

ये चानुपतिता गर्भा यथा भागानुपासते ।

नमस्तेभ्यःस्वधा स्वाहा प्राप्नुवन्तु मुदन्तु ते ।१०४।

ब्रह्मा जी के बाद उत्पन्न होने वाले जो देवता और पितर बालक की भांति यज्ञ में अपने-अपने भाग ग्रहण करते हैं, उन्हें नमस्कार है। वे 'स्वाहा और स्वधा' के द्वारा अपने भाग प्राप्त करके प्रसन्न हों ।१०४।

येऽङ्गुष्ठमात्राः पुरुषा देहस्थाः सर्वदेहिनाम् ।
रक्षन्तु ते हि मां नित्यं-नित्यं चाप्याययन्तु माम् ।१०५।

जो अङ्गुष्ठमात्र जीवके रूप में सम्पूर्ण देहधारियों के भीतर विराजमान हैं, वे सदा मेरी रक्षा और वृद्धि करें ।१०५।

ये न रोदन्ति देहस्था देहिनो रोदयन्ति च ।
हर्षयन्ति न हृष्यन्ति नमस्तेभ्योऽस्तु नित्यशः ।१०६।

जो देह के भीतर रहते हुए स्वय न रोकर देहधारियों को ही रुलाते हैं, स्वयं हर्षित न होकर उन्हें ही हर्षित करते हैं, उन सब रुद्रों को मैं नित्य नमस्कार करता हूं ।१०६।

ये नदीषु समुद्रेषु पर्वतेषु गुहासु च ।
वृक्षमूलेषु गोष्ठेषु कान्तारे गहनेषु च ।१०७।

नदी, समुद्र, पर्वत, गुहा, वृक्षो की जड़, गोशाला, दुर्गम पथ घनेवन ।१०७।

चतुष्पथेषु रथ्यासु चत्वरेषु तटेषु च ।
हस्त्यश्वरथशालासु जीर्णोद्यानालयेषु च ।१०८।

चौराहे, सड़क, चबूतरे, किनारे, हस्तिशाला, अश्वशाला, रथशाला, पुराने वगीचे, जीर्ण गृह ।१०८।

येषु पञ्चसु भूतेषु दिशासु विदिशासु च ।
चन्द्रार्कयोर्मध्यगता ये च चन्द्रार्करश्मिषु ।१०९।

पञ्चभूत, दिशा, विदिशा, चन्द्रमासूर्य तथा उन-उनकी किरणों में ।१०६।

रसातलगता ये च ये च तस्मै परं गताः ।
नमस्तेभ्यो नमस्तेभ्यो नमस्तेभ्योऽस्तुनित्यशः ।११०।

रसातल में और उससे भिन्न स्थानों में भी जो अधिष्ठातृ देवता के रूप में व्याप्त हैं, उन सबको सदा नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है ।११०।

येषां न विद्यते संख्या प्रमाणं रूपमेव च ।
असंख्येयगुणा रुद्रा नमस्तेभ्योऽस्तु नित्यशः ।१११।

जिनकी सख्या, प्रमाण और रूपकी सीमा नहीं है, जिनके गुणोंकी गिनती नहीं हो सकती. उन रुद्रों को मैं सदा नमस्कार करता हूं ।१११।

सर्वभूतकरो यस्मात् सर्वभूतपतिर्हरः ।
सर्वभूतान्तरात्मा च तेन त्वं न निमन्त्रितः ।११२।

आप सम्पूर्ण भूतों के जन्मदाता, सबके पालक और संहारक हैं तथा आप ही समस्त प्राणियों के अन्तरात्मा हैं, इसीलिये मैंने आपको पृथक् निमन्त्रण नहीं दिया ।११२।

त्वमेव होज्यसे यस्माद् यज्ञैर्विविधदक्षिणैः ।
त्वमेव कर्ता सर्वस्य तेन त्वं न निमन्त्रितः ।११३।

नाना प्रकारकी दक्षिणाओंवाले यज्ञों द्वारा आपही का जयन

किया जाता है और आप ही सबके कर्ता हैं, इसीलिये मैंने आपको अलग निमन्त्रण नहीं दिया ।११३।

अथवा मायया देव सूक्ष्मया तव मोहितः ।
एतस्मात् कारणाद् वापि तेन त्वं न निमन्त्रितः ।११४।

अथवा देव ! आपकी सूक्ष्म माया से मैं मोहमें पड़ गया था, इस कारण से भी मैंने आपको निमन्त्रण नहीं दिया ।११४।

प्रसीद मम भद्रं ते भव भावगतस्य मे ।
त्वयि मे हृदयं देव त्वयि बुद्धिर्मनस्त्वयि ।११५।

भगवन् भव ! आपका भला हो, मैं भक्तिभाव के साथ आपकी शरण में आया हूं, इसलिये अब मुझपर प्रसन्न होइये । मेरा हृदय, मेरी बुद्धि और मेरा मन सब आपमें समर्पित हैं ।११५।

स्तुत्वैवं स महादेवं विरराम प्रजापतिः ।
भगवानपि सुप्रीतः पुनर्दक्षमभाषत ।११६।

इस प्रकार महादेव जी की स्तुति करके प्रजापति दक्ष चुप हो गये । तब भगवान् शिव ने भी बहुत प्रसन्न होकर दक्षसे कहा ।११६।

परितुष्टोऽस्मि ते दक्ष स्तवेनानेन सुव्रत ।
बहुनात्र किमुक्तेन मत्समीपे भविष्यसि ।११७।

उत्तम व्रत का पालन करनेवाले दक्ष ! तुम्हारेद्वारा की हुई इस स्तुतिसे मैं बहुत संतुष्ट हूं । यहां अधिक क्या कहूं, तुम मेरे निकट निवास करोगे ।११७।

अश्वमेधसहस्रस्य वाजपेयशतस्य च ।
प्रजापते मत्प्रसादात् फलभागी भविष्यसि ।११८।

'प्रजापते ! मेरे प्रसाद से तुम्हें एक हजार अश्वमेध तथा एक सौ वाजपेय यज्ञका फल मिलेगा' ।११८।

अथैनमब्रवीद् वाक्यं लोकस्याधिपतिर्भवः ।
आश्वासनकरं वाक्यं वाक्यविद्वाक्य सम्मतम् ।११९।

तदनन्तर वाक्यविशारद, लोकनाथ भगवान् शिवने प्रजापति को सान्त्वना देनेवाला युक्तियुक्त एव उत्तम वचन कहा ।११९।

दक्ष-दक्ष न कर्तव्यो मन्युर्विश्वमिमं प्रति ।
अहं यज्ञहरस्तुभ्यं दृष्टमेतत् पुरातनम् ।१२०।

'दक्ष ! दक्ष ! इस यज्ञ में जो विघ्न डाला गया है, इसके लिये तुम खेद न करना । मैंने पहले कल्प में भी तुम्हारे यज्ञ का विध्वंस किया था । यह घटना भी पूर्वकल्प के अनुसार ही हुई है ।१२०।

भूयश्च ते वरं दद्मि तं त्वं गृह्णीष्व सुव्रत ।
प्रसन्नवदनो भूत्वा तदिहैकमनाः शृणु ।१२१।

'सुव्रत ! मैं पुनः पुनः तुम्हें वरदान देता हूं, तुम इसे स्वीकार करो और प्रसन्नवदन तथा एकाग्रचित होकर यहां मेरी यह बातें सुनो १२।

वेदात् षडङ्गादुद्धृत्य सांख्ययोगाच्च युक्तितः ।
तपः सुतप्तं विपुलं दुश्चरं देवदानवैः ।१२२।

'पूर्वकाल में षडङ्ग वेद, सांख्ययोग और तर्क से निश्चत करके देवताओं और दानवों ने जिस विशाल एवं दुष्कर तपका अनुष्ठान किया था (उससे भी उत्तम व्रत मैं तुम्हें बता रहा हूं) ।१२२।

अपूर्वं सर्वतोभद्र सर्वतोमुखमव्ययम् ।
अब्दैर्दशाहसंयुक्तं गूढमप्राशनिन्दितम् ।१२३।

'दक्ष ! मैंने पूर्वकाल में एक शुभकारक पाशुपत नामक व्रत को प्रकट किया था, जो अपूर्व है, साधन और सिद्धि सभी अवस्थाओं में सब प्रकार से कल्याणकारी, सर्वतोमुखी (सभी वर्णों और आश्रमों के अनुकूल) तथा मोक्षका साधक होनेके कारण अविनाशी है। वर्षों तक पुण्यकर्म करने और यम-नियम नामक दस साधनों को अभ्यास में लाने से उसकी उपलब्धि होती है। वह गूढ़ है। मूर्ख मनुष्य उसकी निन्दा करते हैं ।१२३।

वर्णाश्रमकृतैर्धर्मैर्विपरीतं क्वचित्समम् ।
गतान्तरेध्यवसितमत्याश्रममिदं व्रतम् ।१२४।

यह समस्त वर्ण धर्म और आश्रम-धर्म के अनुकूल, सम और किसी-किसी अंश में विपरीत भी है। जिन्हें सिद्धान्त का ज्ञान है, उन्होंने इसे अपनाने का पूर्ण निश्चय कर लिया है। यह व्रत सभी आश्रमों से बढ़कर है ।१२४।

मया पाशुपतं दक्ष शुभमुत्पादितं पुरा ।
तस्य चीर्णस्य तत् सम्यक् फलं भवति पुष्कलम् ।
तच्चास्तु ते महाभाग त्यज्यतां मानसो ज्वरः ।१२५।

इसके अनुष्ठान से उत्तम एवं प्रचुर फल की प्राप्ति होती है। महाभाग ! उस पाशुपत व्रत के अनुष्ठान का फल तुम्हें प्राप्त हो। अब तुम अपनी मानसिक चिन्ता का परित्याग कर दो ।१२५।

एवमुक्त्वा महादेवः सपत्नीकः सहानुगः ।
अदर्शनमनुप्राप्तो दक्षस्यामितविक्रमः १२६।

दक्ष से ऐसा कहकर पत्नी और पार्षदों सहित अमित पराक्रमी महादेव जी वहीं अन्तर्धान हो गये ।१२६।

दक्षप्रोक्तं स्तवमिमं कीर्तयेद् यः शृणोति वा ।
नाशुभं प्राप्नुयात् किंचिद् दीर्घमायुरवाप्नुयात् ।१२७।

जो मनुष्य दक्ष के द्वारा कहे हुए इस स्तोत्र का कीर्तन अथवा श्रवण करेगा, उसे कोई अमङ्गल नहीं प्राप्त होगा। वह दीर्घ आयु प्राप्त करता है ।१२७।

यथा सर्वेषु देवेषु वरिष्ठो भगवाञ्छिवः ।
तथा स्तवो वरिष्ठोऽयं स्तवानां ब्रह्मसम्मतः ।१२८।

जैसे भगवान् शिव सब देवताओं में श्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार यह वेदतुल्य स्तोत्र सभी स्तुतियों में श्रेष्ठ है ।१२८।

यशोराज्यसुखैश्वर्यकामार्थधनकांक्षिभिः ।
श्रोतव्यो भक्तिमास्थाय विद्याकामैश्च यत्नतः ।१२९।

यश, राज्य, सुख, ऐश्वर्य, काम, अर्थ धन और विद्या की इच्छा रखनेवाले पुरुषों को भक्तिभाव का आश्रय लेकर यत्न

पूर्वक इस स्तोत्र का श्रवण करना चाहिये ।१२६।

व्याधितो दुःखितो दीनश्चोरग्रस्तो भयार्दितः ।
राजकार्याभियुक्तो वा मुच्यते महतो भयात् ।१३०।

रोगी, दुःखी, दीन, चोर के हाथ में पड़ा हुआ, भयभीत तथा राजकार्य का अपराधी मनुष्य भी इस स्तोत्रका पाठ करने से महान् भय से छुटकारा पा जाता है ।१३०।

अनेनैव तु देहेन गणानां समतां व्रजेत् ।
तेजसा यशसा चैव युक्तो भवति निर्मलः ।१३१।

इतना ही नहीं, वह इसी शरीर से भगवान् शिव के गणों की समानता प्राप्त कर लेता है तथा तेज और यश से सम्पन्न होकर निर्मल हो जाता है ।१३१।

न राक्षसाः पिशाचा वा न भूता न विनायकाः ।
विघ्नं कुर्युर्गृहे तस्य यत्रायं पठ्यते स्तवः ।१३२।

जिसके यहां इस स्तोत्र का पाठ होता है, उसके घर में राक्षस, पिशाच, भूत और विनायक कभी कोई विघ्न नहीं करते हैं ।१३२।

शृणुयाच्चैव या नारी तद्भक्ता ब्रह्मचारिणी ।
पितृपक्षे भर्तृपक्षे पूज्या भवति देववत् ।१३३।

जो नारी भगवान् शङ्कर में भक्तिभाव रखकर ब्रह्मचर्य का पालन करती हुई इस स्तोत्र को सुनती है वह पितृकुल और

पतिकुल में देवता के समान आदरणीय होती है ।१३३।

शृणुयादयः स्तव कृत्स्न कीर्तयेद्वा समाहितः ।
तस्य सर्वाणि कर्माणि सिद्धि गच्छन्त्यभीक्ष्णशः ।१३४।

जो एकाग्रचित्त होकर इस सम्पूर्ण स्तोत्र को सुनता अथवा पढ़ता है, उसके सारे कार्य सदा ही सिद्ध होते रहते हैं ।१३४।

मनसा चिन्तितं यच्च यच्च वाचानुकीर्तितम् ।
सर्वं सम्पद्यते तस्य स्तवस्यास्यानुकीर्तनात् ।१३५।

वह मनसे जिस वस्तु के लिये चिन्तन करता है अथवा वाणी से जिस मनोरथ की याचना करता है, उसका वह सारा अभीष्ट इस स्तोत्र के बार-बार पाठ से सिद्ध हो जाता है ।१३५।

देवस्य च गुहस्यापि देव्या नन्दीश्वरस्य च ।
बलिं सुविहितं कृत्वा दमेन नियमेन च ।१३६।

मनुष्य को चाहिये कि यह इन्द्रियों को संयम में रख कर शौच-संतोष आदि नियमों का पालन करते हुए महादेव जी, कार्तिकेय, पार्वतीदेवी और नन्दिकेश्वर को विधिपूर्वक पूजोपहार समर्पित करे ।१३६।

ततस्तु युक्तो गृह्णीयान्नामान्याशु यथाक्रमम् ।
ईप्सिताल्लंभते सोऽर्थान् भोगान् कामांश्च मानवः ।१३७।

फिर एकाग्रचित्त होकर क्रमशः इन सहस्र नामों का पाठ करे। ऐसा करने से मनुष्य शीघ्र ही मनोवाञ्छित पदार्थों, भोगों

और कामनाओं को प्राप्त कर लेता है ।१३७।

मृतश्च स्वर्गमाप्नोति तिर्यक्षु च न जायते ।
इत्याह भगवान् व्यासः पराशरसुतः प्रभुः ।१३८।

तथा मृत्यु के पश्चात् स्वर्ग में जाता है । उसे पशु-पक्षी आदि की योनि में जन्म नहीं लेना पड़ता है । इस प्रकार सर्वसमर्थ पराशरनन्दन भगवान् व्यासजी ने इस स्तोत्र का माहात्म्य बतलाया है ।१३९।

इति श्री महाभारत शान्तिपर्वणि मोक्षपर्वणि दक्षप्रोक्त शिवसहस्रनामस्तवे चतुरशीत्यधिकद्विशततमोऽध्यायः ।२८४।

इस प्रकार श्री महाभारत शान्तिपर्व के अन्तर्गत मोक्षधर्मपर्व में दक्ष द्वारा कथित शिवसहस्रनाम स्तोत्र विषयक दो सौ चौरासीवां अध्याय पूरा हुआ ।

॥ ५१२. अथ 'गणेशाथर्वशीर्षम् ॥

ॐ नमस्ते गणपतये । त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि । त्वमेव केवलं कर्त्तासि । त्वमेव केवलं धर्त्तासि । त्वमेव केवलं हर्त्तासि । त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि । त्व साक्षादात्मासि नित्यम् । ऋतं वच्मि । सत्यं वच्मि । अव त्वं माम् । अव वक्तारम् । अव श्रोतारम् । अव दातारम् अव धातारम् । अवानूचानमव शिष्यम् । अव पश्चात्तात् । अव पुरस्तात् । अवोत्तरात्तात् । अव दक्षिणात्तात् । अव चोर्ध्वात्तात् । अवाधरात्तात् । सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात् । त्व वाङ्मयस्त्व चिन्मयः । त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः । त्व सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि । त्व प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि । सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते । सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति । सर्वं जगदिद त्वयि लयमेष्यति । सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति । त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः । त्वं चत्वारिवाक् पदानि । त्वं गुणत्रयातीतः । त्वमवस्थात्रयातीतः । त्वं देहत्रयातीतः । त्वं कालत्रयातीतः । त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम् । त्वं शक्तित्रयात्मकः । त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम् । त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् । गणादीन्पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम् । अनुस्वारः परतरः । अर्धेन्दुलसितम् । तारेण रुद्धम् । एतत्तव मनुस्वरूपम् । गकारः पूर्वरूपम् । अकारो मध्यमरूपम् । अनुस्वारश्चान्त्यरूपम् । बिन्दुरुत्तररूपम् । नादः सन्धानम् । सँहिता सन्धिः । सैषा गणेशविद्या । गणक ऋषिः निचृद्गायत्री छन्दः । गणपतिर्देवता ॐ गं गणपतये नमः । एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि । तन्नो दन्ती प्रचोदयात् । एकदन्त चतुर्हस्तं पाशमङ्कशधारिणम् रदञ्च

वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम् । रक्त लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम् । रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम् । भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम् । आविर्भूतञ्च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम् । एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः । नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्त्तये नमः । एतदथर्वशीर्षं योधीते । स ब्रह्मभूयाय कल्पते । स सर्वविघ्नैर्न बाध्यते । स सर्वतः सुखमेधते । स पञ्चमहापापात्प्रमुच्यते । सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायम्प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति । सर्वत्राधीयानोऽपविघ्नो भवति । धर्ममर्थं कामं मोक्षञ्च विन्दति । इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम् । यो यदि मोहाद्दास्यति । स पापीयान् भवति । सहस्रावर्त्तनाद्यं यं काममधीते । तं तमनेन साधयेत् । अनेन गणपतिमभिषिञ्चति । स वाग्मी भवति । चतुर्थ्यामनश्नञ्जपति । स विद्यावान् भवति । इत्यथर्वणवाक्यम् । ब्रह्माद्यावरणं विद्यान्न बिभेति कदाचनेति । यो दूर्वाङ्कुरैर्यजति । स वैश्रवणोपमो भवति । यो लाजैर्यजति । स यशोवान् भवति । स मेधावान् भवति । यो मोदकसहस्रेण यजति । स वाञ्छितफलमवाप्नोति । यः साज्यसमिद्भिर्यजति । स सर्वं लभते स सर्वं लभते । अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग्ग्राहयित्वा । सूर्यवर्चस्वी भवति । सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा । सिद्धमन्त्रो भवति । महाविघ्नात्प्रमुच्यते । महादोषात्प्रमुच्यते । महाप्रत्यवायात्प्रमुच्यते । स सर्वविद्भवति । स सर्वविद्भवति । य एवं वेद । इत्युपनिषत् । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ इति गणेशाथर्वशीर्षम् ॥

॥ ५१६. अथ 'देव्यथर्वशीर्षम्' ॥

ओं सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवी साब्रवीदहं ब्रह्मस्वरूपिणी । मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत् । शून्यं चाशून्य च अहमानन्दानानन्दौ अहं विज्ञानाविज्ञाने अह ब्रह्माब्रह्मणी द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये । इति वाथर्वणी श्रुतिः । अहं पञ्चभूतानि अहं पञ्चतन्मात्राणि अहमखिलं जगत् वेदोऽहमवेदोहम् विद्याहमविद्याहम् अजाहमनजाहम् अधश्चोर्ध्वं च तिर्यक्काहम् अहँरुद्रभिर्वसुभिश्चरामि अहमादित्यैरुत विश्वदेवैः अह मित्रावरुणावुभौ बिभर्मि अहमिन्द्राग्नी अहमश्विना उभौ अहँसोमं त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि अह विष्णुमुरुक्रमम् ब्रह्माणमुत्प्रजापतिं दधामि अह दधामि द्रविणँ हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुव्रते अहँ राज्ञीसङ्गमनी वसूनाम् चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् अहँ सुवे पितरमस्य मूर्द्धन्मम योनिरप्स्वांतः समुद्रे य एवं वेद सदेवीँ सम्पदमाप्नोति ते देवा अब्रुवन् । नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै दियताः प्रणताः स्म ताम् । तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम् । दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्यामहेऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः । देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति । सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धनुर्वागस्मानुपसुष्टुतैतु । कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम् । सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम् । महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् । अदितिर्ह्य जनिष्ट दक्षया दुहिता तव । तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः । कामो योनिः कमला वज्रपाणिर्गुहाहसा मातलिश्चाभ्रमिन्द्रः । पुनर्गुहा

सकला मायया चापृथक्क्लेशा विश्वमातादिविद्याः । एषात्मशक्तिः। एषा विश्वमोहिनी पाशांकुशधनुर्बाणधरा । एषा श्रीमहाविद्या । य एवं वेदस शोकं तरिति । नमस्ते भगवति मातरस्मान्पाहि सर्वतः । सैषा वैष्णवा वसवः सैवैकादश रुद्राः सैषा द्वादशादित्याः सैषा विश्वे देवाः सोमपा असोमपाश्च सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचयक्षसिद्धाः सैषा सत्वरजस्तमांसि सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतिष्कलाकाष्ठादिविश्वरूपिणी तामहं प्रणौमि नित्यम् । पापापहारिणी देवी भुक्तिमुक्तिप्रप्रदायिणी । अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां सर्वदा शिवाम् । वियदाकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम् । अर्द्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् । एवमेकाक्षरं मन्त्रं यतयः शुद्धचेतसः । ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः । वाङ्मया ब्रह्मभूस्तस्मात् षष्ठवक्त्रसमन्वितम् । सूर्यो वामश्रोत्रविन्दुसयुताष्टतृतीयकम् । नारायणेन संमिश्रो वायुश्चाधारयुक्तयः । विच्चे नवार्णकोणस्य महानानन्ददायकः । हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम् । पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम् । त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुह भजे । भजामि त्वां महादेवि महाभयविनाशिनि । महादारिद्यशमनी महाकारुण्यरूपिणी । यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति । तस्मादुच्यते अज्ञेआ । यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता । यस्या लक्षं नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अजा । एकैव सर्वत्र वर्त्तते तस्मादुच्यते एका । एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यतेऽनेका । अत एवोच्यतेऽज्ञेयानन्तालक्षाजैकानेका । मन्त्राणां मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी । ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी । यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्त्तिता । तां दुर्गां दुर्गमा देवीं

दुराचारविघातिनीम् । नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम् । इदमथर्वशीर्षं योऽधीते । स पञ्चाथर्वशीर्षफलमाप्नोति । इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा योऽर्चां स्थापयति । शतलक्षं प्रजप्त्वापि नार्चाशुद्धिं च विन्दति । शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः । दशवारं पठेद्यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते । महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः । सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति । निशीथे तुरीयसन्ध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति । नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा देवतासान्निध्यं भवति । भौमाश्विन्यां महादेवीसन्निधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति स महामृत्युं तरति । य एवं वेद इत्युपनिषत् ॥

॥ इति देव्यथर्वशीर्षम् ॥

॥ ५१४. अथ 'शिवाथर्वशीर्षम् ॥

ओं देवा ह वै स्वर्गलोकमायंस्ते रुद्रमपृच्छन् को भवानिति । सोऽब्रवीदहमेकः प्रथममासीद्वर्तामि च भविष्यामि च नान्यः कश्चिन्मत्तो व्यतिरिक्त इति । सोऽन्तरादन्तरं प्राविशद्दिशश्चान्तरं प्राविशत्सोऽहं नित्यानित्यो व्यक्ताव्यक्तो ब्रह्माब्रह्माहं प्राञ्चः प्रत्यञ्चोहं दक्षिणाञ्च उदञ्चोऽहमधश्चोर्ध्वश्चाहं दिशश्च प्रतिदिशश्चाहं पुमानपुमान् स्त्रियश्चाहं सावित्र्यहं गायत्र्यहं त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप् चाऽहं छन्दोऽहं सत्योऽहं गार्हपत्यो दक्षिणाग्निराहवनीयोऽहं गौरहं गौर्यहमृगहं यजुरहं सामाहमथर्वाङ्गिरसोऽहं ज्येष्ठोऽहं श्रेष्ठोऽहं वरिष्ठोऽहमापोहं तेजोऽहं गुह्योऽहमरण्योऽहमक्षरमहं क्षरमहं पुष्करमहं पवित्रमहमुग्रञ्च बलिश्च पुरस्ताज्ज्योति-

रित्यहमेव सर्वेभ्यो मामेव स सर्वः समायो मां वेद स देवान्वेद सर्वांश्च वेदान् साङ्गानपि ब्राह्मणैश्च गां गोभिर्ब्राह्मणान् ब्राह्मणेन हविर्हविषा आयुरायुषा सत्यं सत्येन धर्मेण धर्मं तर्पयामि स्वेन तेजसा। ततो ह वै ते देवा रुद्रमपृच्छन् ते देवा रुद्रमपश्यन् ते देवा रुद्रमध्यायन् ते देवा ऊर्ध्वबाहवो रुद्रं स्तुवन्ति ।१। ओं यो वै रुद्रः स भगवान यश्च ब्रह्मा तस्मै वै नमो नमः ।१। यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च विष्णुस्तस्मै० ।२। यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च स्कन्दस्तस्मै० ।३। यो वै रुद्रः स भगवान् यश्चेन्द्रस्तस्मै० ।४। यो वै रुद्रः स भगवान् यश्चाग्निस्तस्मै० ।५। यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च वायुस्तस्मै० ।६। यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च सूर्यस्तस्मै० ।७। यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च सोमस्तस्मै० ।८। यो वै रुद्रः स भगवान् येऽष्टौ ग्रहास्तस्मै० ।९। यो वै रुद्रः स भगवान् ये चाष्टौ प्रतिग्रहास्तस्मै० ।१०। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च भूस्तस्मै० ।११। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च भुवस्तस्मै० ।१२। यो वै रुद्र स भगवान् यच्च स्वस्तस्मै० ।१३। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च महस्तस्मै० ।१४। यो वै रुद्रः स भगवान् या च पृथिवी तस्मै० ।१५। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्चन्तरिक्षं तस्मै० ।१६। यो वै रुद्रः स भगवान् या च द्यौस्तस्मै० ।१७। यो वै रुद्रः स भगवान् याश्चापस्तस्मै० ।१८। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च तेजस्तस्मै० ।१९। यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च कालस्तस्मै० ।२०। यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च यमस्तस्मै० ।२१। यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च मृत्यस्तस्मै० ।२२। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्चामृतं तस्मै० ।२३। यो वै रुद्रः सः भगवान् यच्चाकाशं तस्मै० ।२४। यो वै रुद्रः स

भगवान् यच्च विश्वं तस्मै० ।२५। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च स्थूलं तस्मै० ।२६। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च सूक्ष्मं तस्मै० ।२७। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च शुक्लं तस्मै० ।२८। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च कृष्णं तस्मै० ।२९। यो वै रुद्रः भगवान् यच्च कृत्स्नं तस्मै० ।३०। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च सत्यं तस्मै० ।३१। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च सर्वं तस्मै० ।३२।२। भूस्ते आदिर्मध्य भुवस्ते स्वस्ते शीर्षं बिश्वरूपोऽसि ब्रह्मैकस्त्वं द्विधा त्रिधा वृद्धिस्त्वं शान्तिस्त्वं पुष्टिस्त्वं हुतमहुत दत्तमदत्तं सर्वमसर्वं विश्वमविश्वं कृतमकृत परमपरं परायणञ्च त्वम् । अपामसोममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान् । किंनूनमस्मान् कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृतं मर्त्यस्य सोमसूर्यपुरस्तात्सूक्ष्मः पुरुषः । सर्वं जगद्धितं वा एतदक्षरं प्राजापत्यं सौम्यं सूक्ष्म पुरुषं ग्राह्यमग्राह्येण भावं भावेन सौम्यं सौम्येन सूक्ष्मं सूक्ष्मेण वायव्यं वायव्येन ग्रसति तस्मै महाग्रासाय वै नमो नमः । हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणाः प्रतिष्ठिताः । हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः । तस्योत्तरतः शिरो दक्षिणतः पादौ य उत्तरतः स ओङ्कारः य ओङ्कारः स प्रणवः यः प्रणवः स सर्वव्यापी यः सर्वव्यापी सोऽनन्तः योऽनन्तस्तत्तारं यत्तारं तच्छुक्लं यच्छुक्लं तत्सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं तद्वैद्युतं यद्वैद्युतं ब्रह्म यत परं ब्रह्म स एकः य एकः स रुद्रः यो रुद्रः स ईशानः य ईशानः स भगवा् महेश्वरः ।३। अथ कस्मादुच्यते ओङ्कारः । यस्मादुच्चार्य-माण एव प्राणानूर्ध्वमुत्क्रामयति तस्मादुच्यते ओङ्कारः । अथ कस्मादुच्यते प्रणवः यस्मादुच्चार्यमाण एव ऋग्यजुःसामाथर्वाङ्गिरस ब्रह्म ब्राह्मणेभ्यः प्रणामयति नामयति च तस्मादुच्यते प्रणवः । अथ कस्मादुच्यते सर्वव्यापी यस्मादुच्चार्यमाण एव यथा स्नेहेन पलल-

पिण्डमिव शान्तरूपमोतप्रोतमनुप्राप्तो व्यतिषक्तश्च तस्मादुच्यते सर्वव्यापी। अथ कस्मादुच्यतेऽनन्तः यस्मादुच्चार्यमाण एव तिर्यगूर्ध्वमधस्ताच्चास्यान्तो नोपलभ्यते तस्मादुच्यदेऽनन्तः । अथ कस्मादुच्यते तारं यस्मादुच्चार्यमाण एव गर्भजन्मव्याधिजरामरणसंसारमहाभयात्तारयति त्रायते च तस्मादुच्यते तारम् । अथ कस्मादुच्यते शुक्लं यस्मादुच्चार्यमाण एव क्लन्दते क्लामयति च तस्मादुच्यते शुक्लम् । अथ कस्मादुच्यते सूक्ष्मं यस्मादुच्चार्यमाण एव सूक्ष्मो भूत्वा शरीराण्यधितिष्ठति सर्वाणि चाङ्गान्यभिमृश्यति तस्मादुच्यते सूक्ष्मम् । अथ कस्मादुच्यते वैद्युतम् । यस्मादुच्चार्यमाण एव व्यक्ते महति तमसि द्योतयति तस्मादुच्यते वै द्युतम् । अथ कस्मादुच्यते परं ब्रह्म यस्मात् परमपरं परायणञ्च बृहद्बृहत्या बृंहयति तस्मादुच्यते परं ब्रह्म । अथ कस्मादुच्यते एक. यः सर्वान् प्राणान् सम्भक्ष्य सम्भक्षणेनाजः संसृजति विसृजति तीर्थमेके व्रजन्ति तीर्थमेके दक्षिणाः प्रत्यञ्च उदञ्चः प्राञ्चोऽभिव्रजन्त्येके तेषां सर्वेषामिह सङ्गतिः साकं स एकोऽभूदन्तश्चरति प्रजानां तस्मादुच्यते एकः । अथ कस्मादुच्यते रुद्रः यस्मादृषिभिर्नान्यैर्भक्तैर्द्रुतमस्य रूपमुपलभ्यते तस्मादुच्यते रुद्रः । अथ कस्मादुच्यते ईशानः यः सर्वान्देवानीशते ईशानीभिर्जननीभिश्च शक्तिभिः । अभित्वा शूरनोनुमो दुग्धा इव धेनवः । ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुष इति तस्मादुच्यते ईशानः । अथ कस्मादुच्यते भगवान् महेश्वरः यस्माद्भक्तान् ज्ञानेन भजत्यनुगृह्णाति च वाचं संसृजति विसृजति च सर्वान् भावान्परित्यज्यात्मज्ञानेन योगैश्वर्येण महति महीयते यस्मादुच्यते भगवान् महेश्वरः । तदेतद्रुद्रचरितम् ।४। एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः । स एव

जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः । एको रुद्रो न द्वितीयाय तस्मै य इमांल्लोकानीशत ईशनीभिः । प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति चान्तकाले संसृज्य विश्वाभुवनानि गोप्ता । यो योनिं योनिमधितिष्ठत्येको येनेदं सर्वं विचरति सर्वम् । तमीशान वरद देवमीड्यं निचाय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति । क्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे । रुद्रमेकत्वमाहुः शाश्वतं वै पुराणमिषमूर्जेण पशवोनुनामयन्तं मृत्युपाशान् । तदेतेनात्मन्नेतेनार्धचतुर्थेन मात्रेण शान्तिं संसृजति पशुपाशविमोक्षणं या सा प्रथमा मात्रा ब्रह्मदेवत्या रक्ता वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद्ब्रह्मपदम् । या सा द्वितीया मात्रा विष्णुदेवत्या कृष्णवर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद्वैष्णवं पदम् । या सा तृतीया मात्रा ईशानदेवत्या कपिला वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्य स गच्छेदैशानं पदम् । या सार्धचतुर्थी मात्रा सर्वदेवत्याऽव्यक्ती भूता खं विचरति शुद्धा स्फटिकसन्निभा वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्य स गच्छेत्पदमनामयम् । तदेतदुपासीत मुनयो वाग्वदन्ति न तस्य ग्रहणमय पन्था विहित उत्तरेण येन देवा यान्ति येन पितरो येन देवा यान्ति येन पितरो येन ऋषयः परमपरं परायणं चेति । वालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये विश्वं देवं जातरूपं वरेण्यम् । तमात्मस्थ ये नु पश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिर्भवति नेतरेषाम् । यस्मिन् क्रोध याञ्च तृष्णां क्षमाञ्चाक्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलम् । बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे रुद्रमेकत्वमाहुः । रुद्रो हि शाश्वतेन वै पुराणेनेषमूर्जेण तपसा नियन्ता ग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्वं ह वा इदं भस्म मन एतानि चक्षूंषि यस्माद्व्रतमिदं पाशुपतं यद्भस्म नाङ्गानि संस्पृशेत् तस्माद्ब्रह्म तदेतत्पाशुपतं

पशुपाशविमोक्षणाय ।५। योऽग्नौ रुद्रो योऽप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश । य इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय नमोऽस्त्वग्नये । यो रुद्रोऽग्नौ यो रुद्रोऽप्स्वन्तर्यो रुद्र ओषधीर्वीरुध आविवेश । यो रुद्र इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः । यो रुद्रोऽप्सु यो रुद्र औषधीषु यो रुद्रो वनस्पतिषु । येन रुद्रेण जगदूर्ध्वं धारितं पृथिवी द्विधा त्रिधा धर्त्ता धारिता नागा येन्तरिक्षे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः । मूर्धानमस्य संसेव्याप्यथर्वा हृदयञ्च यत् । मस्तिष्कादूर्ध्वं प्रेरयत्यवमानोऽधिशीर्षतः । तद्वा अथर्वणः शिरो देवकोशः समुज्झितः । तत् प्राणोऽभिरक्षति शिरोऽन्तमथो मनः । न च दिवो देवजनेन गुप्ता न चान्तरिक्षाणि न च भूम इमाः । यस्मिन्निदं सर्वमोतप्रोतं तस्मादन्यन्न परं किञ्च नास्ति । न तस्मात्पूर्वं न परं तदस्ति न भूतं नोत भव्यं यदासीत सहस्रपादेकमूर्ध्ना व्याप्त स एवेदमावरीवर्ति भूतम् । अक्षरात् सञ्जायते कालः कालाद् व्यापक उच्यते । व्यापको हि भगवान् रुद्रो भोगायमानो यदा शेते रुद्रस्तदा संहार्यते प्रजाः । उच्छ्वसिते तमो भवति तमस आपोऽश्वङ्गल्या मथिते मथितं शिशिरे शिशिरं मथ्यमानं फेनं भवति फेनादण्डं भवत्यण्डाद्ब्रह्मा भवति ब्रह्मणो वायुः वायोरोङ्कारः ओङ्कारात्सावित्री सावित्र्या गायत्री गायत्र्या लोका भवन्ति । अर्चयन्ति तपः सत्यं मधुक्षरन्ति यद्ध्रुवम् । एतद्धि परमं तपः । आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरों नम इति ।६। य इदमथर्वशिरो ब्राह्मणोऽधीते । अश्रोत्रियः श्रोत्रियो भवति । अनुपनीत उपनीतो भवति । सोऽग्निपूतो भवति । स वायुपूतो भवति । स सूर्यपूतो भवति । स सोमपूतो भवति । स सत्यपूतो भवति । स सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति । स सर्वैर्वेदैरनुध्यातो भवति ।

स सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति। तेन सर्वैः क्रतुभिरिष्टं भवति। गायत्र्याः षष्टिसहस्राणि जप्तानि भवन्ति। प्रणवानामयुतं जप्तं भवति। स चक्षुषः पङ्क्तिं पुनाति। आसप्तमात् पुरुषयुगान्पुनातीत्याह भगवानथर्वशिरः सकृज्जप्त्वैव शुचिः स पूतः कर्मण्यो भवति। द्वितीयं जप्त्वा गणाधिपत्यमवाप्नोति। तृतीयं जप्त्वैवमेवानुप्रविशत्यों सत्यमों सत्यमों सत्यम् इत्यथर्ववेदे शिरोऽथर्वशीर्षम्

(इति शिरउपनिषत्)

।। ५१३. अथ 'नारायणाथर्वशीर्षम् ।।

अथ पुरुषो ह वै नारायणोऽकामयत प्रजाः सृजेयेति। नारायणात्प्राणो जायते। मनः सर्वेन्द्रियाणि च खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी। नारायणाद्ब्रह्मा जायते। नारायणाद्विष्णुर्जायते। नारायणाद्रुद्रो जायते। नारायणादिन्द्रो जायते। नारायणात्प्रजापतिः प्रजायते। नारयणाद्द्वादशादित्या रुद्रा वसवः सर्वाणि छन्दांसि। नारायणाद्देवाः समुत्पद्यन्ते। नारायणात्प्रवर्तन्ते। नारायणे प्रलीयन्ते। अथादित्यो नारायणः। ब्रह्मा नारायणः। शिवश्च नारायणः। शक्रश्च नारायणः। कालश्च नारायणः। अधश्च नारायणः। दिशश्च नारायणः। ऊर्ध्वं च नारायणः। नारायण एवेदँसर्वं यद्भूतं यच्च अन्तर्बहिश्च नारायणः। निष्कलो निरञ्जनो निर्विकल्पो निराख्यातः शुद्धो देव भाव्यम्। निष्कलो निरञ्जनो निर्विकल्पो निराख्यातः शुद्धो देव एको नारायणो न द्वितीयोऽस्ति कश्चित्। य एवं वेद। स विष्णुरेव भवति स विष्णुरेव भवति। ओं इत्यग्रे व्याहरेत्। नम इति पश्चात्। नारायणायेत्युपरिष्टात्। ओं इत्येकाक्षरम्। नम इति द्वे अक्षरे। नारायणायेति पञ्चाक्षराणि। एतद्वै नारायणस्याष्टाक्षरं

पदम् । यो ह वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदमध्येति । अनुपब्रवः सर्वमायुरेति । विन्दते प्रजां रायस्पोषं गौपत्यम् । ततोऽमृतत्वमश्नुते ततोऽमृतत्वमश्नुत इति प्रत्यगानन्दं ब्रह्मपुरुषं प्रणवस्वरूपम् । अकार उकारो मकार इति । तानेकधा संयोज्य तदेव तदोमिति । यमुक्त्वा मुच्यते योगी जन्मसंसारबन्धनात् । ओं नमो नारायणायेति मन्त्रोपासकः । वैकुण्ठभुवनं गच्छति । तदिदं परमं पुण्डरीकं विज्ञानघनम् । तस्मात्तडिदाभमात्रम् । ब्रह्मण्यो देवकीपुत्रो ब्रह्मण्यो मधुसूदनः । सर्वभूतस्थमेकं वै नारायणम् । कारणरूपं परब्रह्मकम् । एतदथर्वशीर्षं योऽधीते । सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति । मध्यन्दिनमादित्याभिमुखोऽधीयानः । सद्यः पञ्चामहापातकोपपातकेभ्यो मुच्यते । सर्ववेदपारायणपुण्यं लभते । श्रीनारायणसायुज्यमवाप्नोति । य एवं वेद । इत्युपनिषत् ॥

॥ इति नारायणाथर्वशीर्षम् ॥

॥ ५१५. अथ 'सूर्याथर्वशीर्षम् ॥

अथ सूर्याथर्वाङ्गिरसं व्याख्यास्यामः ब्रह्मा ऋषिः । आदित्यो देवता । गायत्री छन्दः । हंसाग्निनारायणयुक्तं बीजम् । हल्लेखा शक्तिः । द्विपदादि सर्गसंयुक्तं कीलकम् । धर्मार्थकाममोक्षेषु जपे विनियोगः ।

षट्स्वरारूढबीजेन षडङ्गं रक्ताम्बुजसंस्थितं सप्ताश्वरथिनं हिरण्यवर्णं चतुर्भुजं पद्मद्वयाभयवरदहस्तं कालचक्र प्रणेतारं च श्रीसूर्यनारायणं य एवं वेद स वै ब्राह्मणः । ओं भूः । ओं भुवः । ओं स्वः । ओं

महः। ॐजनः। ॐ तपः। ॐ सत्यम्। ॐ तत्सवि० परोरजसेसावदोम्। ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च। सूर्याद्वै खल्विमानि भूतानि जायन्ते। सूर्याद्यज्ञः पर्जन्योऽन्नमात्मा। नमस्ते आदित्याय त्वमेव केवलं कर्त्तासि। त्वमेव प्रत्यक्षं विष्णुरसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वमेव प्रत्यक्ष रुद्रोऽसि त्वमेव प्रत्यक्षमृगसि त्वमेव प्रत्यक्ष यजुरसि। त्वमेव प्रत्यक्षं सामासि। त्वमेव प्रत्यक्षमथर्वासि। त्वमेव सर्वं छन्दोसि। आदित्याद्वायुर्जायते। आदित्याद्भूमिर्जायते। आदित्यादापो जायन्ते। आदित्याज्ज्योतिर्जायते। आदित्याद्व्योम दिशो जायन्ते। आदित्याद्वेदा जायन्ते। आदित्याद्देवा जायन्ते। आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपति। असावादित्यो ब्रह्म। आदित्योऽन्त करणमनोबुद्धिचित्ताहङ्काराः। आदित्यो वै व्यानसमानोदानापानप्राणाः। आदित्यो वै श्रोत्रत्वक्चक्षुरसनानासाः। आदित्यो वै वाक्पाणिपादोपस्थपायूनि। आदित्यो वै शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः। आदित्यो वै वचनादानगमनानन्दविसर्गाः। आनन्दमयो ज्ञानमयो विज्ञानमय आदित्य। नमो मित्राय भानवे मृत्योर्मा पाहि भ्राजिष्णवे विश्वहेतवे नमः। सूर्यो नो दिवस्पातु वातो अन्तरिक्षात्। अग्निर्न. पार्थिवेभ्यः। सूर्याद्भवन्ति भूतानि। सूर्येण पालितानि तु। सूर्ये लयं प्राप्नुवन्ति। यः सूर्यः सोहमेव च। चक्षुर्नोदेवः सविता। चक्षुर्न उत पर्वतः। चक्षुर्धाता दधातु नः। आदित्याय विद्महे सहस्रकराय धीमहि। तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्। सविता पश्चात्तात्। सविता पुरस्तात्। सवितोत्तरात्तात्। सविताधरात्तात्। सविता नः सुवतु सर्वतातिम्। सवितानो रासतां दीर्घमायुः। ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म घृणिरिति द्वे अक्षरे सूर्य इत्यक्षरद्वयम्। आदित्य इति

त्रीण्यक्षराणि एतद्वै सूर्यस्याष्टाक्षरं मनुम् । यः सदाहरहर्जपति । योऽसौ ब्रह्मण्योब्राह्मणो भवति । सूर्याभिमुखं जप्त्वा महाव्याधिभया-त्प्रमुच्यते । अलक्ष्मीर्नश्यति । अभक्ष्यभक्षणात्पूतो भवति । अपेय-पानात्पूतो भवति । अगम्यागमनात्पूतो भवति । व्रात्यसम्भाषणात्पूतो भवति । मध्याह्ने सूर्याभिमुखः पठेत् । सद्यः पञ्चमहापापात्प्रमु-च्यते । सैषा सावित्री ,विद्या न कस्यचित्प्रशंसेत् । एतन्महाभागः प्रातः पठति स भाग्यवान् जायते । पशून् विन्दति वेदार्थं लभते । त्रिकालं जप्त्वा क्रतुशतफलं प्राप्नोति । हस्तादित्ये जपति स महामृत्यं तरति । य एवं वेद । इत्युपनिषत् ॥इति सूर्याथर्वशीर्षम्॥

卐 श्री देविकालहरी 卐

श्रियामायानं यद्विमलबसने सर्वजगतां-
क्रियास्ताम्बुधनन्ते नियत हविषां पावनविधौ ।
धियां पावित्रीयोऽवनिविदिततीर्थं वनमयं-
वपुश्चेदं शर्वं सकलमशुभं वारयतु नः ।१।

शिवार्द्धाङ्गे वासो विधिजतनयायाः प्रथमतो
गृहन्ते कैलासे रजितभुवनभ्राजिततटे ।
भ्रमर्त्याऽऽक्रीडे बाऽप्यवनिधरपुत्र्यास्सुरनुते-
सरिद्रूपञ्चैतद्धरतु जगतां पापमखिलम् ।२।

इदङ्कुम्मधामम्भुवनजगताँ खण्डमखिलं-
पवित्रीकर्त्तुं वै नवसलिलबिम्बं विदधती ।
प्रभासे शुद्धे च द्रुमवति सुघाटे सुरपतेः-
समुत्तीर्णाधाराभरणवसना शैवशिखरात् ।३।

सरिद्रूपन्धृत्वाजनि वृजिननाशङ्करु शिवं-
जनानां मद्राणां गृहतनयवित्ताप्तमनसाम् ।
उवाचेदं शम्भुर्मृदुतरमनोज्ञं मधुवचः-
भवानीमापन्नां विनयनतदेहाँ निजगिरौ ।४।

शिवाशम्भोराज्ञाँ परिणतगुणस्यामरगणै-
र्गृहीत्वा कैलासाज्जनकुशलभावाभिजननी ।
समुत्तीर्णा दृष्ट्वा हरशिरसि जाताँ सुरनदीं-
दधौ रूपम्भव्यं वनमयवपुर्द्राविकमिदम् ।५।

तदाशम्भूरूपं मुनिवरनुतं लैङ्गमधिकं-
दधारोच्चैस्तीरे भुवनवनशैलद्युतिकरम् ।
वृषाद्यैर्देवेशैर्नमितवदनैर्वन्धमभितो-
भवानी व्याश्लेषादमितमहिमाशङ्कितमनाः ।६।

यदा चैन्द्राद्घाटादचलदमलं वारिनिचयं-
नुतिङ्गीर्ग्याश्चक्रुर्मुनिवरसमूहाः समुचिताम् ।
तदा वीणानादध्वनितमुरजैः किन्नरगणैः-
स्वरैश्चेदम्भद्रं त्रिदशवरवध्वा परिजगुः ।७।

यदाविर्भूतन्तै द्युतिधरपदाद्द्राविकपयो-
जनानामज्ञानाँ शमलभवतापोपशमनम् ।
निषेव्यन्तत्प्राज्ञैर्दिविजनमितन्नो हृदि सदा-
वसत्वेवं चक्रुर्नतिमखिलदेवाः श्रुतिधराः ।८।

समृद्धं स्वामित्वं परिजनवृतं त्यज्य सहसा-
जनन्यास्तत्त्वानां मृदुलतटवासा ऽमलदृशाम् ।

पयस्तेस्वादीयो विमलतरमातृप्तिपिबतॉं-
मृषायन्ते, सद्यः सुरवरपदेभ्योऽपि विविधाः ।६।

स्पृशन् यस्सौगन्ध्यन्नवसुमनसां धीरपवन -
स्त्वदीयानां प्रावृड्जनितलहरीणां व्यतिकरात् ।
पुनातीमां पूतस्त्ववनिमखिलां स्वर्गं सहितां-
निनादोऽप्यान्ते यः शमयति खलूच्चैर्यमरुतम् ।१०।

अमी मातर्धन्याः खगमृगगणा दाविकतटे-
पयः पूतं पीत्वा शमितदुरिता दिव्यवपुषः ।
व्रजन्त्यन्ते शान्तास्त्रिदशवरवृन्दप्रमुदिताः-
महन्माहेन्द्रं ते निबिडतरुरम्यं वनमदः ।११।

अनूरौ स्नान्तीनां जनपदवधूनां घनकुचं-
स्थितं सौगन्ध्यं यन्मृगमदयुतं दाविकवने ।
वलन्त्यन्तस्ते तन्मृतमृगसमूहा दिवमिता-
स्तवैतत्प्राकाम्यं जननि गदितुन्नार्हति विधिः ।१२।

त्वदम्बूनां नाम स्मरति हृदये दाविकमिति-
जनः पावित्रीयान्भवति शतपापैरपि वृतः ।
अहो चालं वासो जननि तव तीरे बनमहो-
जनोद्धारं बद्धादृढपरिकरं त्वङ्कुरु भवात् ।१३।

श्रितोऽपान्तेमार्तविषयविषतृष्णावृतचिदाम्-
अदृश्यः पाताले त्वमितवलवल्यादिभिरपि ।
कफादिव्यावर्त्तं वदनविवरं जातु विशतां-
शरीरान्ते तावत्परमफलदो नोऽपि भवतु ।१४।

पिनाकीकैलाशे षदविधुतिभिर्नृत्यति मुदा-
विभुश्शेतामब्धौ भुजगमृदुभोगोऽपि शयने ।
विधातात्रैपृष्टे त्वविरतसमाधिर्भवतु वा
तदौदास्यन्दृष्ट्वा जननि तव तीरं ह्यपगतः ।१५।

विभुर्भक्ताऽतर्कोमदनभटहन्ता च मनसा-
उपेक्षन्ते मान्यैर्द्रुतपिहितकर्णाः करपुटैः ।
स्फुटस्ते व्यासङ्गो मदपतितनिस्तारणकृतौ
अतोमातस्त्वां वै शरणपदवीं यामि सततम् ।१६।

अवक्तव्यं व्रात्यैः पिशुनमनुजैर्यन्न्यपहृतं-
विगर्ह्यन्तून्मत्तैरतिपतितवृन्दैः परिहृतम् ।
हरन्त्येनःसर्वं श्रमविरहितैका विजयते-
यदुद्धारौदास्यं भवति भजतान्मार्द्रहृदया ।१७।

यदौदास्यं जाताऽऽस्यमलहृदयध्यानपथगे-
ममाघव्यूहान्ते ऽकृतयजनहव्याधिपनतेः ।

तदानीमेवार्ये जगति जयिनामूर्जितयशो-
लयं याता रम्यं शमनभटहासंस्तवतटे ।१८।

मदोन्मत्तानस्तान् वृषलरमणीसक्तमनसः-
महारोगग्रस्तान् करपदविहीनानपि नरान् ।
जडान्यन्धव्यङ्गान्प्रकृतिविषमाद्यामपि नरान्-
परित्यक्तान्देवैरमतमवितुं स्वौषधमसि ।१९।

यदन्तः क्रीडन्तोन्वनवरतमानन्दभरिता-
न गृध्राःश्वेतास्ते त्रिदिवगमनेच्छाजितयमाः ।
निवेशान्नारीणामशुभशमनो ऽवद्यवपुषां-
तटोऽयं मातस्ते भव विगमशूरो भवतु नः ।२०।

विभान्तेभूतेशाजटिलशिरसश्चन्द्रविभया-
निनेतुं ह्यायातायम पुरमघा ये यमभटा ः।
कृता वासन्तीरे जननि तव शुद्धे च मनुजं-
गतं पञ्चत्वं ते हृतकलुषमालोक्य विगताः ।२१।

वृहत्त्वद्वीचीनाममलपयसा मार्जितवपुः-
शरीरान्ते शेते धृतिधर नरो दाविकतटे ।
तदैनद्धित्वार्य्ये व्रजति पदमाद्यं मधुरिपो-
र्विमानस्थो मान्यस्त्वदितिलनुजातामपि दिवि ।२२।

सुशैलं निश्शोकं कमनकलहंसाद्यभिरमं-
तरुव्रातच्छायं कुसुमभरलुब्धालिनिचितम् ।
सुधा प्रख्या धारापतनध्वनितं दाविकमिदं-
पुनीतं तीरन्ते मदघवृकयूथं विधमतु ।२३।

भवत्यां सावित्र्यां श्रुतिकुशलमादौ व्यवसितं-
शिवम्भूय्यर्यासं विधिधृतविशेषं बहुपथम् ।
तदेवायं धत्ते त्रिदिवगमनायाश्ववहित-
स्तवैतेनैवैतन्नवलपयसाऽभ्येति सकलम् ।२४।

प्रवाहेऽपान्तेयाः सिततरलहर्य्यो घनतटा-
स्तरङ्गै रुत्तेङ्गैर्मृदुल पवनैश्चापि च लतैः ।
सुधासिन्धो मातर्भव वनभवाग्निज्वलशिखं-
नयन्त्वार्द्रैः शान्ति विवनगृहकूपप्रपतिलाम् ।२५।

इयं या ते मूर्त्तिः सुरवरनुता पावनमयी-
जनानां येषां हृन्नवनलिन नालं यदि गता ।
निहन्त्याश्वेनांसि त्वरुण इव भूय्यस्तृततमः-
घटस्वेदानी मे यमरणकूपोद्धारसरणीम् ।२६।

शरच्चन्द्राभां त्वाममलविधुबिम्बार्द्धमुकटां-
सुनद्धग्रैवेयद्युतिनिकरभूषाङ्गदधतीम् ।

जपन्त्यायत्ताहृन्नवजलजकोशे सुमनसः-
न तेषां भक्तानाँ क्वचिदपि च याम्यः परिभवः ।२७।

स्तवैर्देवींस्तव्यां श्रुतिविदितसारार्थललितैः-
महापद्मासीनां यजनवरदाँ शुभ्रवसनाम् ।
स्मरन्ति ध्यानेनैकतरमनसा येऽघधमनीं-
विसृज्येमं मर्त्या गिरिशधरश्रृङ्गेऽमृतभुजः ।२८।

वहन्तीं शीतांशुं शिरसि तव सीमन्तसरणीं-
द्विधाभिन्नाकेशां करविधृतपद्माँ विधिनुताम् ।
जनास्त्वद्भृत्या ये त्ववनिपृथुपृष्ठे सुविमले-
भजन्ति त्वामम्ब प्रतिदिवसमाजन्मपविताः ।२९।

हरन्त्याः सत्वानां दुरितसमवायं शिवचिदा-
स्वसृष्टानाम्भूतैः प्रबलगुणमय्या गिरिसुते ।
धृता पाश्चार्द्धाङ्गे हतमनसिजेनातिवशिना-
महत्वं वक्तुन्ते कथमपि न विज्ञः प्रभवति ।३०।

भूमेर्जलधिपरिधेर्भूरिवितथं-
समृद्धित्वं
किमीश त्वं क्रीडारचितजगतां यत्पशुपतेः ।
स्मृतीनाँ वचित्र्यं फलमथ सतां पुण्यनिवहं-
पयः पीयूषाभं तव जननि शन्नः प्रदिशतु ।३१।

विरिञ्चिः सञ्चिन्वंस्तव चरणकञ्जोद्भवपयः-
स देवान्सर्वेशः प्रजनयति लोकानवरतम् ।
विमृग्यं शेषेणाऽप्यवनिदधता सेव शिखरात्-
समुत्तीर्णा कर्तुं दिविज नरसूद्धारणविधिम् ।३२।

शचीशोऽपीदन्ते ललितचरणाम्भोजसलिलं-
गजेन्द्रादुत्तीर्य्यावनितलमगम्यं दिविषदाम् ।
शिरस्याधत्ते यो मणिमयकिरीटद्युति मति-
र्वृतो देवव्रातैस्त्रिदशवनितानृत्यमुदितैः ।३३।

सुरस्त्रीसंघातस्त्रिदिवभुवनाद्दाविकपयः-
परिस्नातुं यातस्तव जननि तीरं हयमुखैः ।
जगौ चेदम्भद्रं श्रुतिमृदुलमध्यं समुरजै-
रभूतत्सङ्गीतं गिरिशसुखदङ्कीचकरवम् ।३४।
मुनिव्रातैर्यत्तैस्समरशतधीरैश्च कृतिभिः-
सुरज्येष्ठेनापि स्मरमटमजेयं हि वलिनम् ।
निहत्याजौ रुद्रोऽखिलभुवनवंद्यां सुयतिता-
म्गात्त्वत्सम्पर्कादशुभशमनी नो भव शिवे ।३५।
इदन्ते शीताम्भः स्फटिकप्रतिमं कौतपविधौ-
प्रयुक्तं पश्यानान्दुरितभरविस्राढिधपतितां ।

व्यसूनामुद्धारञ्जन निकुरुते ते च विदिते-
महीयन्ते लोके शिशिरशशिनः शान्तवपुषः ।३६।

लतासम्पृक्तानान्नवकुसुमभारप्रवहता-
न्तरूणान्तामस्यं मधुकरवृतानां परिगतम् ।
त्वदीयानां पानाद्विशदपयसामार्ज्जवपदै-
स्तरङ्गोत्सृष्टानाञ्जननि तरुजन्मापि च यतः ३७।

चलद्वीचीक्षोभभ्रमित झषचक्रोर्ज्जितरवे-
जगत्प्राणोद्धूतद्रुमगलितपुष्पाऽऽस्तृततटे ।
प्रवाहे त्वद्वाराँ पिकशिखिगणा येऽतिमधुरं-
नदन्तीहाऽऽलोकध्वनय इव पूलांघ्रिपगृहाः ३८।

अहोऽन्तर्मङ्गाणाँ हिमगिरिगुरोर्ड्ग्रहृदयात्-
सहस्राराधारे भगवति शिवे दाविकमयै ।
चतुर्विंशत्क्रोशायतिरपि चतुर्विस्तृतिरथो-
मुमुक्षुप्रेतानाँ तरणि ! तरणी नत्वदपरा ।३९।

नमश्चिद्रूपायै त्रिगुणबलमय्यै प्रकृतये ।
नमः सद्रूपायै विधुशकलमौलेऽखिलभृते ॥
सरिद्रूपायै ते पवितवसुधायै श्रुतवतां-
ददत्यै निर्वाणं निरवधिसुखं सत्वनिधये ।४०।

जगत्पूज्यायै ते यजनफलदायै भव छिदे-
नमो मेदिन्यै ते ऽखिलवसुधरायै सुश्रवसे ।
नमो धीरायै ते विशदगुणमय्यै सुगतये ।
नमो वैष्णव्यै ते मुनिवृढयुतायै सुमतये ।४१।

यस्यास्तेऽमलवीचयो भुवि ववुर्गुप्ताऽऽस्तृता देविके-
या धृत्वाऽ खिलवंद्यवेदवदनास्त्वङ्गे ऽत्र लोकङ्गताः ।
दण्डाद्यस्त्रधरामहोग्रवपुषो याभ्यो यमा दूरत-
स्ता दिव्या नरलोकपावनकराः सेव्या बुधैस्सर्वदा ।४२।

यस्मिन्प्रपीते पयसि त्वदीये नृणामघं नश्यति चान्तराश्रितम् ।
स्वच्छं सुधासम्मितमद्यनस्तत्करोतु भव्यम्भवभीतचेतसाम् ।४३

त्वत्पादसम्भूतपयः प्रचेतास्तं धार्य्य पूतं शिरसाप सिद्धिम् ।
शेषस्त्वदीयान्विदितान्गुणान्वै शक्नोति नैवाद्यतने न मातुम् ४४

त्वमेव गंगा यमुना त्वमेव त्वमेव सिन्धुश्च सरस्वती वै ।
त्वन्देविकारूपमपीह शर्वे दधर्थलोकाय विनाशनाय ।४५।

त्वमेव मातर्बहुधा व्यवस्थिता त्वमेव माया खलु शाम्भवीति ।
त्वत्तोऽप्यनन्ता जगतःप्रसूतिस्तत्वैश्चिदाभास बलेन देव्याः ४६

सदाऽऽपोज्योतिष्टे ऽत्रनिदहरगान्तः प्रवहति-
भुवः पृष्ठस्थानां सकलशमलानि प्रदहति ।
इदानीं हिन्दूनां निखिलकलुषं त्वं परिहर-
कुरुष्वेतान्नित्यं हृदयबलयुक्तानृषिवृढान् ।४७।

सदाचारे निष्ठान्प्रबलतमदुष्टक्षयकरान्-
प्रचारे वेदानामनुदिनमधियज्ञे रुचियुताम् ।
गृहेष्वासक्तानां हृदि सबलनिष्ठां द्रढयितुं-
सशक्तान्वाग्भक्ताञ्जननि ! कुरु सद्योऽग्रजवरान् ।४८।

अज्ञात विदुषा सृष्टाँ लहरीं देविका प्रियाम् ।
विहारीलाल वासिष्ठो मुद्राप्यैनां समर्पये ।।

।। इति श्रीदेविकालहरी सम्पूर्णा ।।

卐 अथ महामृत्युञ्जयस्तोत्रम् 卐

नमो महामृत्युञ्जयाय । श्रीनन्दिकेश्वर उवाच-

कैलासस्योत्तरे शृङ्गे शुद्धस्फटिकसन्निभे ।
तमोगुणविहीने तु जरामृत्युविवर्जिते ।१।
सर्वतीर्थास्पदाधारे सर्वज्ञानकृतालये ।
कृताञ्जलिपुटो ब्रह्मा ध्यानशीलं सदाशिवम् ।२।
पप्रच्छ प्रणतो भूत्वा जानुभ्यामवनीं गतः ।
सर्वार्थसम्पदाधारं ब्रह्मा लोकपितामहः ।३।

ब्रह्मोवाच

केनोपायेन देवेश ! चिरायुर्लोमशोऽभवत् ।
तन्मे ब्रूहि महेशान ! लोकानां हितकाम्यया ।४।

श्रीसदाशिवःप्राह

शृणु ब्रह्मन् प्रवक्ष्यामि चिरायुर्मुनिसत्तमः ।
सञ्जातः कर्मणा येन व्याधिमृत्युविवर्जितः ।५।
तस्मिन्नेकार्णवे घोरे सलिलौघपरिप्लुते ।
कृतान्तभयनाशाय स्तुतो मृत्युञ्जयः शिवः ।६।

तस्य संकीर्तनान्नित्यं मुनिर्मृत्युविवर्जितः ।
तमेव कीर्तयन् ब्रह्मन् मृत्युञ्जेतुं न संशयः ।७।

लोमेश उवाच

देवाधिदेव देवेश ! सर्वप्राणभृतांवर ।
प्राणिनामसि नाथस्त्वं मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।८।

देवानाँ जीवभूतोऽसि जीवो जीवस्य कारणम् ।
जगतां रक्षकस्त्वं वै मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।९।

हिमाद्रिशिखराकार सुधावीचिमनोहर ।
पुण्डरीक परं ज्योतिर्मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।१०।

ध्यानाधार महाज्ञान ! सर्वज्ञानैककारण ।
परित्राताऽसि लोकानां मृत्युंजय नमोऽस्तु ते ।११।

निहता येन कालेन सदेवासुरमानवाः ।
गन्धर्वाप्सरसश्चैव सिद्धविद्याधरास्तथा ।१२।

साध्याश्च वसवो रुद्रा तथाश्विनिसुतावुभौ ।
मरुतश्च दिशो नागाः स्थावरा जङ्गमास्तथा ।१३।

अनङ्गेन मनोजेन पुष्पचापेन केवलम् ।
जितःसोऽपि त्वया ध्यानान्मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।१४।

ये ध्यायन्ति परां मूर्ति पूजयन्त्यमराधिप ।
न ते मृत्युवशं यान्ति मृत्युञ्जय नमोस्तु ते ।१५।
स्थावरे जङ्गमे वापि यावत्तिष्ठति मेदिनी ।
जीवतु इत्याह लोकोऽयं मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।१६।
त्वमोंकारोऽसि वेदानां देवानाञ्च सदाशिवः ।
आधारशक्तिः शक्तीनां मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।१७।
सोमसूर्याग्निमध्यस्थ व्योमव्यापिन् सदाशिव !
कालप्रद महाकाल मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।१८।
प्रबुद्धे चाप्रबुद्धे च त्वमेव सृजते जगत् ।
सृष्टिरूपेण देवेश मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।१९।
व्योम्नि त्वं व्योमरूपोऽसि तेजः सर्वत्र तेजसि ।
प्राणिनां ज्ञानरूपोऽसि मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते २०।
जगज्जीवो जगत्प्राणः स्रष्टा त्वं जगतः प्रभुः ।
कारणं सर्वतीर्थानां मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।२१।
नेता त्वमिन्द्रियाणाञ्च सर्वज्ञानप्रबोधक ।
सांख्ययोगश्च हंसश्च मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।२२।
रूपातीतः सुरूपश्च पिण्डश्च पदमेव च ।
चतुर्युगकलाधार ! मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।२३।

रेचके वह्निरूपोऽसि सोमरूपोऽसि पूरके ।
कुम्भके शिवरूपोऽसि मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।२४।
क्षयंकरोऽसि पापानाँ पुण्यानामपि वर्द्धनः ।
हेतस्त्वं श्रेयसाँ नित्यं मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।२५।
सर्वमायाकलातीत ! सर्वेन्द्रियपरावर ।
सर्वेन्द्रियकलाधीश ! मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।२६।
रूपं गन्धो रसः स्पर्शः शब्दसंस्कार एव च ।
त्वत्तः प्रकाश एतेषां मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।२७।
चतुर्विधानां सृष्टीनां हेतुत्वं कारणेश्वर ।
भावाभावपरिच्छिन्न मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।२८।
त्वमेको निष्कलो लोके सकलं भुवनत्रयं ।
अतिसूक्ष्मातिरूपस्त्वं मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।२९।
त्वं प्रबोधस्त्वमाधारस्त्वद्बीजं भुवनत्रयम् ।
सत्वं रजस्तमस्त्वं हि मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।३०।
त्वं सोमस्त्वं दिनेशश्च त्वमात्मा प्रकृतेः परः ।
अष्टत्रिंशत्कलानाथ मृत्युंजय नमोऽस्तु ते ।३१।
सर्वेन्द्रियाणामाधार ! सर्वभूतगुहाशय !
सर्वेऽज्ञानमयानन्त मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।३२।
त्वमात्मा सर्वभूतानां गुणानां त्वमधीश्वरः ।
सर्वानन्दमयाधार ! मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।३३।

त्वं यज्ञः सर्वयज्ञानां त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ।
शब्दब्रह्म त्वमोङ्कारो मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ।३४।

श्रीसदाशिव उवाच

एवं संकीर्तयेद्यस्तु शुचिस्तद्गतमानसः ।
भक्त्या शृणोति यो ब्रह्मन् न स मृत्युवशो भवेत् ।३५।
न तु मृत्युभयं तस्य प्राप्तकालं च लंघयेत् ।
अपमृत्युभयं तस्य प्रणश्यति न संशयः ।३६।
व्याधयो नो प्रपद्यन्ते नोपसर्गभयं क्वचित् ।
प्रत्यासन्नान्तरे काले शतैकावर्तने कृते ।३७।
मृत्युर्न जायते तस्य रोगान्मुञ्चति निश्चलम् ।
पञ्चम्यां वा दशम्यां वा पौर्णमास्यामथावि वा ।३८।
शतमावर्तयेद्यस्तु शतवर्षं स जीवति ।
तेजस्वी बलसम्पन्नो लभते श्रियमुत्तमाम् ।३९।
त्रिविधं नाशयेत्पापं मनोवाक्कायसम्भवम् ।
अभिचाराणि सर्वाणि कर्माण्याथर्वणानि च ।।
क्षीयन्ते नात्र सन्देहो दुःस्वप्नं च विनश्यति ।४०।
इदं रहस्यं परमं देवदेवस्य शूलिनः ।
दुःखप्रणाशनं पुण्यं सर्वविघ्नविनाशनम् ।४१।
इति श्रीब्रह्मसंवादे श्रीमहामृत्युञ्जयस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

ॐ

अविवाहितानां पुरुषाणां कृते विवाहार्थमनुष्ठानम्

विनियोगः–उों पत्नीं मनोरमां देहीति मन्त्रस्य विष्णुर्ऋषिरनुष्टुप् छन्दो महालक्ष्मीर्देवता नवार्णमन्त्रःशक्तिः मन्त्रोदिता देवीवीजं सप्तशती मन्त्रस्तत्वं अशेषविघ्ननिवृत्तिपूर्वक पत्नी प्राप्त्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः— विष्णुऋषये नमः शिरसि । अनुष्टुप् छन्दसे नमः शिखायाम्। महालक्ष्मीर्देवतायै नमो हृदि । नवार्णमन्त्र शक्तये नमो गुह्ये । मन्त्रोदिता देवी वीजाय नमः पादयोः। सप्तशती मन्त्रतत्वाय नमो नाभौ । वीजाय पत्नी प्राप्त्यर्थे विनियोगाय नम सर्वाङ्गे ।

करन्यास—उों क्लीं पत्नींम् अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। उों क्लीं मनोरमां देहीति तर्जनीभ्यां नमः । उों क्लीं मनोवृत्तानुसारिणीं मध्यमाभ्यां नमः। उों क्लीं तारिणीम् अनामिकाभ्यां नमः। उों क्लीं दुर्गसंसारसागरस्य कनिष्ठिकाभ्यां नमः। उों क्लीं कुलोद्भवां करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः।

अथ हृदयादिन्यास— उों क्लीं पत्नीं हृदयाय नमः । उों क्लीं मनोरमां देहि शिरसे स्वाहा। उों क्ली मनोवृत्तानुसारिणीं शिखायै वषट्। उों क्लीं तारिणीं कवचाय हुम्। उों क्लीं दुर्गसंसारसागरस्य नेत्रत्रयाय वौषट्। उों क्लीं कुलोद्भवाम अस्त्राय फट् ।

मन्त्रोद्धारः— उों ऐं ह्रीं क्लीं पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानु-

सारिणीम् तारणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम् । क्लीं ह्रीं ऐं ओं ।। प्रत्यहं सहस्र संख्यात्मको जप: १००० मंगल-दिनान्तम् (अर्थात् विवाह प्रारम्भिक शकुनग्रहण दिनान्तम् नवग्रहशान्ति दिनान्तम् वा) जपेत् ।

ध्यानम्:— शाकम्भरी नीलवर्णा नीलोत्पल विलोचना ।
गम्भीर नाभिस्त्रिवली विभूषित तनूदरी ।।
सुकर्कश मनोतुंग वृत्तपीन घनस्तनी ।
मुष्टिः शिलीमुखैः पूर्णा कमलं कमलालया ।।
पुष्पपल्लव मूलादि फलाद्य शाक सम्भवम् ।
काम्यानन्तरसैर्युक्तं क्षुत्तृण्मृत्युभयापहम् ।।
कार्मुकं च स्फुरत्कान्तिर्बिभर्त्ति परमेश्वरी ।
शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्त्तिता ।।
उमागौरी सतीचण्डी कालिका सापि पार्वती ।
शाकम्भरीं स्तुवन्ध्यायञ्जपन्सम्पूजयन्नमन् ।।
अक्षय्यमश्नुते नित्यमन्नपानामृतादिकम् ।

इति ध्यानम्

सवत् १९७२कार्तिक प्रविष्टे ८ पण्डित अनिरुद्ध शर्म्मकेसरेण हंसाली (कटरा श्रीवैष्णवदेवीद्वार) बासिना लिखितम ।।

तृचाकल्पनमस्कार

(लेखक—डा० श्रीवासुदेवकृष्णजी चतुर्वेदी, डी० लिट्०)

कल्याण प्रेस गोरखपुर से साभार उद्धृत

श्रीसूर्यनारायण भगवान्के प्रीति-हेतु तृचाकल्प-नमस्कार वैदिक मन्त्र और तन्त्राक्षर (बीजों) से संयुक्त ब्रह्मकर्म-समुच्चय में उपलब्ध है।

विधि—आसनपर बैठकर आचमन कर प्राणायाम करे; पुनः हाथ में जल लेकर संकल्प। संकल्पमें देशकालपात्र-तिथि वारादिका उच्चारणकर कहे—

'ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं श्रीसवितृसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं च तृचाकल्पविधिना नमस्काराख्यं कर्माहं करिष्ये।'

इस प्रकार संकल्प कर जल छोड़ दे।

पुनः एक पात्रमें जल भरकर उसमें गन्ध-पुष्प अक्षत रख दे। तदनन्तर हाथमें पुष्प लेकर श्रीसूर्यनारायण का ध्यान करे। ध्यान का मन्त्र यह है—

ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती
नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः।
केयूरवान् मकरकुण्डलवान् किरीटी
हारी हिरण्मयवपुर्धृतशङ्खचक्रः॥

इस प्रकार ध्यान कर निम्नोक्त मन्त्रों का उच्चारण करते हुये नमस्कार करे।

ॐ ह्रां उद्यन्नद्य मित्रमहः ह्रां ॐ मित्राय नमः ॥
ॐ ह्रीं आरोहन्नुत्तरां दिवम् ह्रीं ॐ रवये नमः ॥
ॐ ह्रूं हृद्रोगं मम सूर्य ह्रूं ॐ सूर्याय नमः ॥
ॐ ह्रैं हरिमाणं च नाशय ह्रैं ॐ भानवे नमः ॥
ॐ ह्रौं शुकेषु मे हरिमाणं ह्रौं ॐ खगाय नमः ॥
ॐ ह्रः रोपणाकासु दध्मसि ह्रः ॐ पूष्णे नमः ॥
ॐह्रां अथो हारिद्रवेषु मे ह्रां ॐहिरण्यगर्भाय नमः ॥
ॐ ह्रीं हरिमाणं नि दध्मसि ह्रीं ॐमरीचये नमः ॥
ॐ ह्रूं उदगादयमादित्यः ह्रूं ॐ आदित्याय नमः ॥
ॐ ह्रैं विश्वेन सहसा सह ह्रैं ॐ सवित्रे नमः ॥
ॐ ह्रौं द्विषंतं मह्यं रन्धयन् ह्रौं ॐ अर्काय नमः ॥
ॐ ह्रः मो अहं द्विषते रधं ह्रः ॐभास्कराय नमः ॥
ॐ ह्रां ह्रीं उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवं
ह्रां ह्रीं ॐ मित्ररविभ्यां नमः ॥
ॐ ह्रूं ह्रैं हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय
ह्रूं ह्रैं ॐ सूर्यभानुभ्यां नमः ॥
ॐ ह्रौं ह्रः शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि
ह्रौं ह्रः ॐ खगपूषाभ्यां नमः ॥
ॐ ह्रां ह्रीं अथो हरिद्रवेषु ये हरिमाणं नि दध्मसि

ह्रां ह्रीं ॐहिरण्यगर्भमरीचिभ्याँ नमः ।।

ॐ ह्रूं ह्रैं उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह ह्रूं ह्रैं ॐ आदित्यसवितृभ्यां नमः ।।

ओं ह्रौं ह्रः द्विषन्तं मह्यं रन्धयन् मो अहं द्विषते रथं ह्रौं ह्रः ओं अर्कभास्कराभ्यां नमः ।।

ओं ह्राँ ह्रीं ह्रूं ह्रैं उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तराँ दिवं हृद्रोगं मम सूर्यं हरिमाणं च नाशय ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रूं ह्रैं ओं मित्ररविसूर्यभानुभ्यो नमः ।।

ओं ह्रौं ह्रः ह्रां ह्रीं शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि अथो हरिद्रवेषु मे हरिमाणं नि दध्मसि ह्रौं ह्रः ह्राँ ह्रीं ओं खगपूषहिरण्यगर्भमरीचिभ्यो नमः ।।

ओं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह । द्विषन्तं मह्यं रन्धयन् मो अहं द्विषते रथं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ओं आदित्यसवित्रर्कभास्करेभ्यो नमः ।।

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवम् । हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय ।। शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि । अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं

मुद्रकः—श्रीवैष्णवी प्रिंटिंग प्रेस, सेहदड़ा जम्मू (तवी)